अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-38, अंक-24, 1-15 अगस्त, 2015

अगस्त क्रांति

9 अगस्त

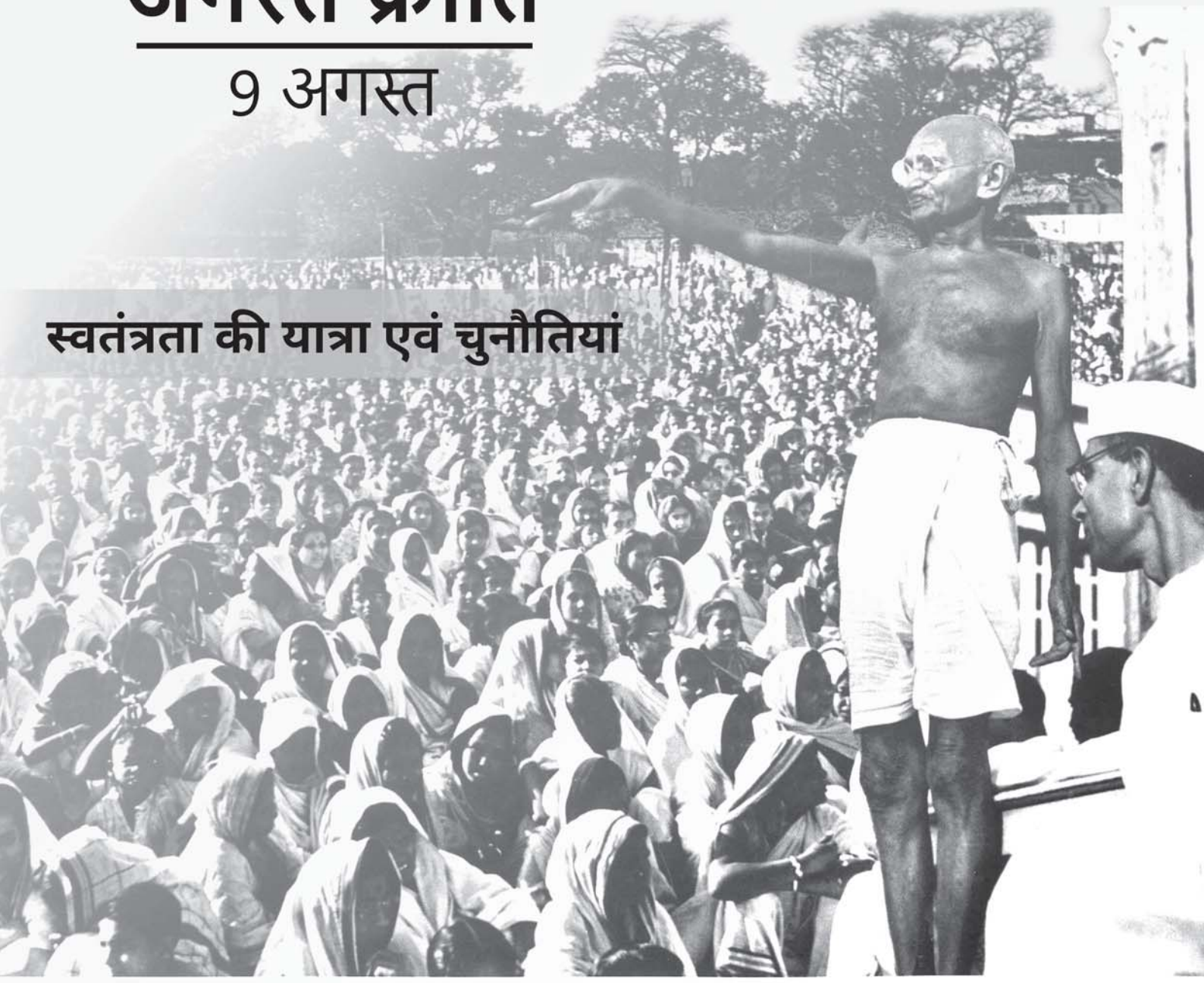

स्वतंत्रता की यात्रा एवं चुनौतियां

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य-अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक
वर्ष : 38, अंक : 24, 1-15 अगस्त, 2015

संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	पांच रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353

विज्ञापन दर

पूरा पृष्ठ	:	**2000 रुपये**
आधा पृष्ठ	:	**1000 रुपये**
चौथाई पृष्ठ	:	**500 रुपये**

इस अंक में...

1. संपादकीय : स्वतंत्रता की यात्रा एवं... 2
2. अगस्त क्रांति का पहला दिन... 3
3. 'हिन्द स्वराज्य' और 'क्रेजी सभ्यता'... 5
4. भूमि अधिग्रहण का सच... 8
5. श्रम की निर्विवाद महत्ता... 11
6. अनमोल पेड़ों का मोल... 12
7. ग्रीस : लोकतंत्र में गरिमा की... 13
8. राष्ट्र-निर्माण और युवा... 14
9. एक अपील... 17
10. सर्व सेवा संघ कार्यकारिणी का... 18
11. गतिविधियां एवं समाचार... 19
12. कविताएं... 20

'सर्वोदय जगत' में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनके साथ सर्व सेवा संघ या संपादक मंडल का सहमत होना जरूरी नहीं है।

संपादकीय

स्वतंत्रता की यात्रा एवं चुनौतियां

स्वतंत्रता कोई घटना नहीं है। इसलिए इसका प्रकट रूप किसी घटना में नहीं देखा जा सकता है। यह एक यात्रा है जो व्यक्ति को और समाज को अपनी पूर्णता की ओर ले जाने की कारक शक्ति के रूप में भी सक्रिय रहती है। इस रूप में स्वतंत्रता लक्ष्य, दिशा और ऊर्जा तीनों प्रदान करता है।

15 अगस्त, 1947 का महत्त्व है कि इस यात्रा को अवरुद्ध करने वाली एक व्यवस्था से हम मुक्त हो गये थे। लेकिन व्यक्ति और समाज को, पूर्णता की ओर ले जाने वाली यात्रा को सुगम बनाने के लिए, और अन्य अवरुद्ध करने वाली व्यवस्थाओं से भी मुक्त करना था। लेकन ये काम अक्सर ही नहीं हुआ, और कभी हुआ भी तो अधूरा और लक्ष्य से भटक जाने वाला।

औपनिवेशिक साम्राज्यवाद ने अपने साथ आर्थिक साम्राज्यवाद को भी बढ़ाया था। 15 अगस्त, 1947, औपनिवेशिक साम्राज्यवाद से मुक्त होने का दिन तो है, लेकिन आर्थिक साम्राज्यवाद से मुक्त होने की पहल उसके बाद नहीं हो पायी। भारत ही नहीं, ऐसा दुनिया के तमाम देशों में हुआ। नव-स्वतंत्र देशों ने, अपने-अपने उत्तर-औपनिवेशिक दौर में, अपने को वैसा ही बनाना चाहा जैसे साम्राज्यवादी देश थे, ऐसी नीतियां विकास के नाम पर अपनायी गयीं। फलतः पूंजीवादी मॉडल के विकास की चाहत तथा पूंजीवादी विकास के लिए विकसित की गयी संस्थाएं ऐसी बनती गयीं जो आर्थिक साम्राज्यवाद को चुनौती देने की कोई क्षमता नहीं रखती थीं। बल्कि आर्थिक साम्राज्यवाद द्वारा निर्मित संस्थाओं की मदद से ही 'विकास' का सफर तय करना चाहती थीं। इसी कारण, 1991 आते-आते यह स्थिति आ गयी कि दुनिया की सभी अर्थव्यवस्थाएं, आर्थिक साम्राज्यवाद के मकड़-जाल में पूरी तरह फंस चुकी थीं।

स्वतंत्रता की यात्रा सही ढंग से शुरू भी नहीं हो पायी थी कि अब एक नयी वैश्विक व्यवस्था से अवरुद्ध हो गयी। गांधीजी ने इस खतरे को 100 वर्ष पूर्व ही भांप लिया था। इसी कारण वे एक ओर तो स्वतंत्रता की यात्रा को अवरुद्ध करने वाली व्यवस्था के खिलाफ सत्याग्रह का सामूहिक प्रयोग करते रहे, तथा दूसरी ओर स्वतंत्रता की यात्रा चलती रहे इसके लिए लोकसत्ता का निर्माण तथा रचनात्मक कार्यों द्वारा आर्थिक साम्राज्यवाद का विकल्प खड़ा करने का प्रयास करते रहे।

आज स्थितियां थोड़ी और कठिन हो गयी हैं। क्योंकि भारत का वर्तमान सत्ता प्रतिष्ठान, इस आर्थिक-साम्राज्यवाद को भारत में और अधिक सशक्त व गहरा बनाने के लिए कृत संकल्प दिख रहा है। भारत का कारपोरेटी पूंजी वाला वर्ग इनके पक्ष में पूरी तरह खड़ा है तथा जनता इसके विरुद्ध एकजुट खड़ी न हो, इसलिए साम्प्रदायिकता की ताकतों का भरपूर इस्तेमाल किया जा रहा है। औपनिवेशिक साम्राज्यवाद से स्वतंत्र होने के आंदोलन को भी साम्प्रदायिकता की ताकतों से जूझना पड़ा था। आज फिर आर्थिक साम्राज्यवाद की और साम्प्रदायिकता की ताकतें एक साथ खड़ी हैं।

इसलिए सर्वोदय आंदोलन को अपने सत्याग्रह की धार को इन दोनों शक्तियों के विरुद्ध एक साथ तेज करना होगा। और साथ ही वैकल्पिक रचना के कार्य व लोकसत्ता के निर्माण के कार्य को भी प्रभावी व व्यापक बनाना होगा। इसके दो अन्य महत्त्वपूर्ण पक्ष होंगे। एक, सत्याग्रही कार्यकर्ता निर्माण तथा दूसरे, सघन क्षेत्रों का विकास—राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक आंदोलन तथा सघन क्षेत्रों में लोकसत्ता का निर्माण तथा वैकल्पिक रचना के कार्यक्रम। बिमल कुमार

अगस्त क्रांति

अगस्त क्रांति का पहला दिन : मुम्बई में

❑ के. विक्रम राव

प्रस्ताव पेश करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने पूछा : ''दो सौ साल के विदेशी शासन के बाद आजादी मांगना क्या गुनाह है?'' तालियों की धुन के बीच अनुमोदक सरदार वल्लभभाई झवेरभाई पटेल ने अंग्रेजों से सीधी अपील की, ''शासन मुस्लिम लीग को दो, चाहे डाकुओं को, पर हिन्दुस्तानियों को सौंपकर भारत से तो जाओ।'' अध्यक्ष मौलाना अबुल कलाम आजाद ने कहा ''सत्ता का हस्तांतरण इसी वक्त हो।''

कुछ पर्व, चंद तिथियां ऐसी होती हैं, जिनपर सिलवट या शिकन समय के थपेड़े डाल नहीं पाते। अगस्त क्रांति का पहला दिन (नौ अगस्त 1942 : भारत छोड़ो) आज भी वैसे ही तरोताजा हो जाता है, जैसा तिहत्तर वर्ष पहले था। हर बार इसका नया तेवर, अलग अंदाज दिखता है जो कभी फिरंगियों का सामना करते समय उभरा था। सन् 1942 की जुलाई की एक शाम थी, दो अंग्रेज युवतियां लम्बी, सलेटी कार में ब्रिटिश सेनाध्यक्ष के निवास (तीनमूर्ति) से वायसराय हाउस (राष्ट्रपति भवन) की ओर चलीं। उनकी बातचीत का विषय था : दिल्ली का खुश्क मौसम, बिनी बार्न्सकी फिल्म 'थ्री गर्ल्स' और पिछली रात का डिनर-डांस। सीट पर पड़े अखबार के बड़े अक्षरों वाले शीर्ष को देख एक बोली—''इन कांग्रेसियों ने बम्बई में अगर हमारे खिलाफ कुछ किया, तो इनकी कैद लंबी होगी। पापा बता रहे थे।''

वायसराय लार्ड लिनलिथगो और कमाण्डर-इन-चीफ सर आर्चिबाल्ड वेवेल की इन बेटियों की बात सुन रहा था मौन हिन्दुस्तानी ड्राइवर। उसे वायसराय साहब की पुत्री को वेवेल साहब के निवास स्थान (तीनमूर्ति) से घर लाने का आदेश हुआ था।

राष्ट्रीय कांग्रेस के मुम्बई अधिवेशन में शरीक होते एक कांग्रेसी नेता को दिल्ली स्टेशन ले जाते समय उनके ड्राइवर ने बताया, ''साहब, इस बार आप शायद जल्दी वापस न लौटें। मुझे मेरे साथी से, जो बड़े लाटसाहब के यहां काम करता है, पता लगा कि कम से कम जापानियों की हार होने तक रिहाई की गुंजाइश नहीं है।''

इतिहास ने इस घटना को भारत छोड़ो आंदोलन बताया। विंस्टन चर्चिल ने इसे 'बगावत जो कुचल दी गयी' कहा। क्रांतिकारी जनवाद के पुरोहित कम्युनिस्टों की नजर में यह हिटलरी षड्यंत्र था। विभाजन के पक्षधर चक्रवर्ती राजगोपालचारी की राय में यह अविवेकी कदम था।

इस रोमांचक वाकये के विषय में इस दौर में काफी लिखा और कहा गया। लेकिन सबसे सजीव विवरण घटना स्थल के समीपस्थ एक पुरानी किताब की दुकान के वृद्ध मराठी मालिक से पांच दशक पूर्व (टाइम्स ऑफ इण्डिया के रिपोर्टर के नाते) मैंने सुना था। उनकी आंखों के समक्ष पूरा चित्र उतर आया।

बदली छायी थी। मौसम नम था। शामियाने में बैठे बीस हजार लोगों में खद्दरधारी तो थे ही, रंगीन व भड़कीले लिबास में महिलाएं काफी थीं। विजयनगरम के महाराज कुमार क्रिकेटर विज्जी और उद्योगपति जे. आर. डी. टाटा शामिल थे। पैंतीस हजार वर्गफीट के मैदान में उपस्थित थे 350 पत्रकार, जिनमें रूसी संवाद एजेंसी तास के प्रतिनिधि और चीनी संवाददाता भी थे। मंच पर कार्यसमिति के लोगों के साथ एक गैर-सदस्य भी था—जेल से छूटकर आये, दक्षिण के जनप्रिय नेता एस. सत्यमूर्ति। उन्होंने राजगोपालाचारी के असहयोग की क्षतिपूर्ति कर दी। कार्यवाही की शुरुआत में वन्देमातरम् हुआ, जिसे सुनकर यूरोपीय अखबार वाले भी खड़े हो गये।

प्रस्ताव पेश करते हुए जवाहरलाल नेहरू ने पूछा : ''दो सौ साल के विदेशी शासन के बाद आजादी मांगना क्या गुनाह है?'' तालियों की धुन के बीच अनुमोदक सरदार वल्लभभाई झवेरभाई पटेल ने अंग्रेजों से सीधी अपील की, ''शासन मुस्लिम लीग को दो, चाहे डाकुओं को, पर हिन्दुस्तानियों को सौंपकर भारत से तो जाओ।'' अध्यक्ष मौलाना अबुल कलाम आजाद ने कहा ''सत्ता का हस्तांतरण इसी वक्त हो।''

महात्माजी सौम्य थे, शायद वक्त की गंभीरता के कारण। उनके शब्द संतुलित थे, ''मैं रहूं या चला जाऊं, भारत स्वाधीन होकर रहेगा।'' बिजली कौंधी, पण्डाल में गूंजा 'करेंगे या मरेंगे।'

दूसरे दिन गोधूलि के समय ढाई सौ प्रतिनिधियों में सिर्फ 13 ने 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव का विरोध किया; 12 कम्युनिस्ट थे और तेरहवें ने अपने कम्युनिस्ट बेटे के कहने पर ऐसा किया था। अधिवेशन के इस निर्णय से देश को दिशा मिली, जनता को कर्म का सन्देश।

प्रस्ताव के बाद गिरफ्तारियां

बाजी अब सरकार की थी। जापान से करारी चोट खाकर, बहादुरी से पीछे भागते अंग्रेजों ने निहत्थे कांग्रेसी नेता व कार्यकर्ता पर फतह पाने की पूरी तैयारी कर रखी थी। सूरज निकलने के पहले ही गिरफ्तारियां इस तेजी से हुई कि कुछ लोगों की गुसल आधी रह गयी, कुछ अपना चश्मा भूल गये, कई अपने कपड़े और किताबें छोड़ आये।

अल्टामाउण्ट रोड स्थित मकान के दरवाजे पर दस्तक सुनकर अधूरी नींद से चौबीस वर्षीया इन्दिरा प्रियदर्शिनी ने किवाड़ खोले। सामने कुछ गोरों को देखकर वह समझी अमरीकी टेलिविजन कम्पनी के लोग पिता जवाहरलाल नेहरू का पूर्व निर्धारित इण्टरव्यू लेने आये हैं। जब ज्ञात हुआ सादी पोशाक में यूरोपीय पुलिस वाहे हैं, तो नेहरू ताली पीटते खिलखिला उठे, ''अहा, आ गये, वे लोग आ गये।''

सिर में भारीपन महसूस कर दो एस्प्रीन की टिकिया चाय के साथ लेकर मौलाना आजाद पिछली शाम के अध्यक्षीय भाषण की थकान दूर कर रहे थे। घड़ी ने भोर के चार बजाये। किसी ने उनका पांव छुआ कि वे उठ गये, देखा मेजबान भूलाभाई देसाई का बेटा भूरा (वारन्ट) कागज लिये पैंताने खड़ा है। डेढ़ घंटे बाद वे पुलिस की गाड़ी में सवार हुए।

ब्रह्ममुहूर्त में महात्मा गांधी आदतन उठ गये। महादेव देसाई ने सूचना दी कि बाहर खड़े पुलिस कमिश्नर बटलर ने पूछा है कि चलने के लिए कितना समय चाहिए। बिरला हाउस घिर गया था।

गांधीजी ने नियमित ढंग से बकरी का दूध और फल के रस का जलपान किया। सबने मिलकर 'वैष्णवजन तो तेणे कहिए' गाया। कुमारी अमतुल सलाम ने कुरान की कुछ आयतें पढ़ीं। कुमकुम लगने और हार पहनने के बाद गांधीजी मीरा बहन और देसाई के साथ चले। पुलिस के साथ सैनिक अधिकारी भी थे।

कस्तूरबा का शिवाजी पार्क में रविवार की शाम को भाषण था। बिरला हाउस दोपहर में पहुंचकर पुलिस ने पूछा, क्या सार्वजनिक सभा स्थगित की जा सकती है। कस्तूरबा अविचल थीं। शांति-भंग के अपराध में उनके नाम की ताजा वारण्ट कटा। वे जेल से जीवित नहीं लौटीं। पूर्वाभास हुआ या वक्त की पाबंदी थी कि सरोजिनी नायडू ने आवश्यक सामान बांध रखा था। 'मैंने सोचा, आप और जल्दी आयेंगे', वे इन्स्पेक्टर से बोलीं। पुलिस के मलाबार हिल पहुंचते ही वे उनके साथ रवाना हो गयीं। ''मुझे सुबह टहलने की आदत है। मैं पैदल ही चलूंगा'' कहा बम्बई राज्य के भूतपूर्व मुख्यमंत्री बी. जी. खेर ने। उन्हें सरकारी गाड़ी में सवार होना पड़ा।

चलते हुए जेलखाने भी

विक्टोरिया (शिवाजी) टर्मिनल स्टेशन पर खड़ी स्पेशल ट्रेन में बागियों को बैठाया गया। एक फौजी अफसर ने गिनती शुरू की। तीन बार गलती हुई तो चौथी दफा जोरों से गिना, ''एक दो...तीस...।'' इसी बीच मौलाना आजाद बोल पड़े, 'बत्तीस'। अफसर को भ्रम हो गया और फिर गिनती शुरू की। तीन ट्रक में लदे चालीस और कैदी आ गये। गाड़ी पुणे की ओर चली। यह ट्रेन नहीं, चलता हुआ जेल था। गाड़ी चिंचवाड़ स्टेशन पर रुकी और गांधीजी को मोटर से पुणे के आगा खां महल में तथा बाकी को यरवदा जेल और अहमदनगर स्थित चांदबीबी के किले में कैद रखा गया। हालांकि पहले योजना थी कि युगाण्डा या दक्षिण अफ्रीका के जेल में ये नेता रखे जायें।

सन् 1942 में रविवारीय अखबार नहीं छपते थे। विशेषांक द्वारा नेताओं की कैद की खबर फैली। इन गिरफ्तारियों का प्रभाव हर जगह हुआ। विद्रोह फैल गया।

उधर गवालिया टैंक मैदान का आकार ही बदल गया। सफेद खादी की जगह खाकी-नीली वर्दियों ने ले ली थी। फिर भी ध्वजारोहण हुआ। अरुणा आसफअली (जिनकी जन्मशती गत जुलाई में थी) ने नेताओं की गिरफ्तारी की सूचना दी। जमा लोग उद्विग्न थे। इतने में पुलिस ने मैदान खाली करने का निर्देश दिया। अर्धवृत्ताकार में खड़ी दिलेर देश सेविकाओं ने चेतावनी अनसुनी कर दी। हमले की शुरुआत अश्रुगैस से हुई। वे सब जमीन पर लेट गयीं, मैदान नहीं छोड़ा। पुलिस अफसर आगे बढ़ा और तिरंगा गिराने लगा। दो युवकों ने प्रतिरोध किया और अस्पताल पहुंचाये गये।

तभी की बात है, स्थानीय अंग्रेजी दैनिक में शीर्षक था—''सभी काम बंद, शहर में आम हड़ताल।'' काम की थकान से पस्त रिपोर्टर, जिसने यह खबर दी थी, स्वयं को कोस रहा था कि वह जनता की बगावत में शामिल नहीं हो पाया। हिंसक वारदातों के बावजूद भी गोरे-काले के रंग-विद्वेष से जन आंदोलन परे रहा। ब्रिटिश सैनिक क्लाइव ब्रेन्सन, जो चित्रकार और कम्युनिस्ट था, अगस्त, सन् 1942 में मुम्बई में था। वर्दी पहने वह कम्युनिस्ट पार्टी दफ्तर की तलाश में लोगों से पूछता शहर घूम रहा था। सैनिक और पुलिस की गोलियों से जनता भूनी जा रही थी। ऐसे आतंकित वातावरण में ब्रेन्सन सुरक्षित ही रहा। उसने लिखा, ''क्या आदर्श राष्ट्रीयता है। निहत्थों को हम मौत दे रहे हैं, यही लोग मेरी मदद कर मुझे कम्युनिस्ट पार्टी दफ्तर का सही मार्ग बता रहे हैं।''

गवालिया टैंक मैदान में जहां अब बगीचा है, आने वाले कल की कल्पना में खोये स्वतंत्र युवा-युवतियों को देखकर पिछली पीढ़ी के बुजुर्गवार को राहत मिली कि उनका बीता हुआ कल काम आया। धुंधली शाम नई सुबह की राह बना रही थी। ❑

विनम्र अपील

'सर्वोदय जगत'

के सभी सुहृद पाठकों, ग्राहकों, लेखकों व शुभचिन्तकों से विनम्र निवेदन है कि अपने महत्त्वपूर्ण समसामयिक आलेख, कविताएं एवं आपके क्षेत्र में हो रही सर्वोदय-विचार की गतिविधियों की जानकारी हमें भेजें, ताकि हम उसे पत्रिका में प्रकाशित कर सकें। –संपा.

'हिन्द स्वराज' और 'क्रेजी सभ्यता'

❑ डॉ. मनोज कुमार राय

''मैं अपने जीवन में जिन निर्णयों पर पहुंचा हूं, उन्हें मैंने इतिहास से नहीं पाया, मेरे विचार-चिन्तनों पर इतिहास का प्रभाव बहुत थोड़ा ही है। मेरी कार्यप्रणाली की नींव अभिज्ञता पर है, अर्थात् मेरे सभी निर्णय अपनी व्यक्तिगत अभिज्ञता में प्राप्त हुए हैं।''

'हिन्द स्वराज' की रचना तो मात्र दस दिन में हुई, परन्तु इसका गर्भकाल बहुत लंबा अर्थात् बीस वर्ष का है। इसीलिए उसका जन्म शुकदेव की तरह पूर्ण यौवन में हुआ है। इसका प्रमाण यह है कि जन्मते ही उसकी अभीव्यक्ति में एक सामाजिक दायित्वबोध, प्रश्नानुकूलता, वैज्ञानिकता और भविष्यद्रष्टा होने के जितने परिपक्क अभिप्राय प्रकट होने थे, या कम से कम उनकी नींव पड़ी। इसके पीछे का रहस्य यह है कि 'हिन्द स्वराज्य' ने अपनी पूर्ववर्ती संपूर्ण सभ्यताओं के गुण-दोष, अनुभव और शिक्षा को अपने भीतर समावेश कर घोर आधुनिक युग के बीच में अपनी आँख खोली थी। इसके साथ तीन-तीन महाद्वीपों (आशिया, यूरोप और अफ्रीका) का प्रत्यक्ष संस्कार जुड़ा हुआ था, जिसने अब तक की तमाम उपलब्धियों को अपनी शब्दावली, परंपरा और तर्क के उपादानों से एक नए सर्वस्वीकृत रूप में रचा। तभी तो 20वीं सदी के प्रसिद्ध लेखक मिडल्टन मेरी को कहना पड़ा, ''मुझे लगता है कि आधुनिक जमाने में लिखी गई पुस्तकों में 'हिन्द स्वराज्य' सबसे महान् पुस्तक है। मैं इसे दुनिया के आध्यात्मिक महाग्रन्थों में एक महाग्रन्थ मानता हूं''।

जिस समय गांधी 'हिन्द स्वराज्य' की प्रसव-पीड़ा से गुजर रहे थे, उनके सामने पिछले दो सौ वर्षों का आधुनिक सभ्यता का विस्तार अपने नग्न रूप को लेकर उपस्थित था। वे क्रेजी सभ्यता के आक्टोपसी स्वरूप को लेकर खासे सतर्क थे। दरअसल गांधी की लड़ाई दो स्तर पर चल रही थी। एक थी बाहरी बनाम भीतरी और दूसरी थी स्वयं की खोज। ध्यान देने की बात है कि गांधी के लिए ये दोनों एक दूसरे के विरोधी नहीं, पूरक हैं। उनके लिए सबसे महत्त्वपूर्ण था अपने भीतर का सत्य। वे अपने भीतर के 'नीरव निभृत स्वर' को सुनने की चेष्टा करते थे, पुनः अपने निर्णयों पर पहुँचते थे। आधुनिक सभ्यता के सन्दर्भ में भी यही सत्य है।

सभ्यता के सन्दर्भ में उन्होंने खूब चिन्तन-मनन किया। तब उन्होंने कहा कि आधुनिक सभ्यता में 'मैं अपने बीस बरस के अनुभव के बाद कहता हूँ कि नीति के नाम से अनीति सिखलायी जाती है।' ऐसा कहना अकारण नहीं है। यह उन्होंने विचारों को अपने अनुभव की आँच में पका करके और अपने पूर्ववर्ती विचारों को आत्मसात करके कहा है। रोमा रोला के प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा था, ''मैं अपने जीवन में जिन निर्णयों पर पहुंचा हूं, उन्हें मैंने इतिहास से नहीं पाया, मेरे विचार-चिन्तनों पर इतिहास का प्रभाव बहुत थोड़ा ही है। मेरी कार्यप्रणाली की नींव अभिज्ञता पर है, अर्थात् मेरे सभी निर्णय अपनी व्यक्तिगत अभिज्ञता में प्राप्त हुए हैं।'' इसी अभिज्ञता ने गांधी को सभ्यता के गुण-दोष को समझने में मदद दी है।

आधुनिक सभ्यता की आलोचना तो अनेक लोगों ने की है, पर जो आलोचना गांधी ने संग्रह और त्याग के विवेक के साथ की है, वह अत्यन दुर्लभ है। वे इसके दोषों को परत-दर-परत उघाड़ते चलते हैं। ऐसा करना उनकी मजबूरी भी है। 'हिन्द स्वराज' में गांधी दोहरी भूमिका में हैं। इस संवाद में संपादक और पाठक दोनों वे स्वयं हैं। अर्थात् जो 'पाठ' है, वह महज वक्तव्य भर ही नहीं है, जिनसे गांधी को टकराना पड़ रहा है। ज्ञान के विकास की यह सहज प्रक्रिया है। इससे व्यक्ति के भीतर बैठा उसका समीक्षक मन कोंच कोंचकर प्रश्न उठाता है और 'संपादक' मन अपने अनुभव, चिंतन, मनन और प्रज्ञा के द्वारा उसका सटीक उत्तर देने का प्रयास करता है। आत्म संवाद की इस औपनिषदीय परम्परा में गांधी गहरे निपुण थे। सवाल उठाने की भी गांधी की अपनी शैली है। उत्तर से पहले शंका। फिर उत्तर पर शंका। सभ्यता पर विस्तृत सवाल-जवाब के अध्याय से पूर्व के अध्याय की अन्तिम पंक्ति जो उत्तर के रूप में है, वहां गांधी कहते हैं, ''वह सभ्यता नुकसानदेह है और उससे यूरोप की प्रजा मालामाल होती जा रही है।'' इसके बाद नया अध्याय 'सभ्यता का दर्शन' प्रश्न से शुरू होता है।

आधुनिक सभ्यता द्वारा फैलाई गई चतुर्दिक बीमारी की 'संक्षिप्त विस्तार' से चर्चा करते हुए गांधी उसकी जड़ पर चोट करते हैं। वे इस अध्याय में कुछ महत्त्वपूर्ण व शाश्वत बिन्दुओं को उठाते हैं, जिनकी प्रासंगिकता आज कुछ ज्यादा ही समझ में आ रही हैं। मसलन 'इस सभ्यता की सच्ची पहचान तो यही है कि इसमें मनुष्य बाह्य खोजों में और शरीर के सुख में धन्यता-सार्थकता और पुरुषार्थ मानते हैं। ...शरीर-सुख कैसे मिले, यही आज की सभ्यता ढूँढ़ती है और यही देने की वह कोशिश करती है। परन्तु वह सुख भी उन्हें नहीं मिल पाता। ''अब यदि हम इस सूत्र की ओर आँख गड़ाकर इसके निहितार्थ को

जानने का प्रयास करें तो सारी चीजें खुद-ब-खुद स्पष्ट हो जायेंगी।

''हिन्द स्वराज' की रचना के बाद लगभग सौ वर्ष बीतने को हैं। जो सवाल 'सभ्यता के सन्दर्भ' में तब उठाये गये थे, वे आज उससे कहीं ज्यादा शिद्दत से महसूस किये जा रहे हैं। बीसवीं सदी के प्रारम्भ में ही गांधी ने देख लिया था कि यह 'आधुनिक सभ्यता' व्यक्ति के व्यक्तित्व को ही खा रही है। वह सब कुछ के त्याग पर बस प्रदर्शन और भोग का ही चिन्तन करता है। जो चिन्ता गांधी की बीसवीं सदी के अन्तिम दशक की है...''आधुनिकीकरण का आकर्षण जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी अभिव्यक्ति पा रहा है। एक छोटा-सा वर्ग,जो सम्पन्न था और विकास-क्रम के लाभों से जिसकी स्थिति और सुदृढ़ हो गई थी, आधुनिकता का प्रतिरूप बना। उसकी जीवन-शैली बदली, विचार-शैली नहीं। यह छद्म आधुनिकता थी, जो अहं के साथ वहम पाल रही थी। यह अभिजात्य और सम्पन्नता की झीनी परत पश्चिमीकरण को ही आधुनिकता मान बैठी थी। विवेक के तर्क और परानुभूति की भूमिकाओं की सचलता और सक्रियता आदि गुण, जो आधुनिकता के आधार-लक्षण हैं, उसने नहीं अपनायें भोगवादी और प्रदर्शनावादी जीवन-शैली जरूर अपना ली।''कहना न होगा कि जिसकी चिंता समाज-विज्ञानियों को आज हो रही है, उसे गांधी ने बहुत पहले ही भाप लिया था।

पैसा ही सब कुछ है—'सर्वे गुणाः कांचन आश्रयन्ते' का संकेत गांधी ने 'हिन्द स्वराज' में किया है। वे यह देश सके थे कि आधुनिक सभ्यता का पुरुषार्थ शरीर-सुख है और इसमें उसका सहायक है अर्थ (पैसा)। मनुष्य दिन-रात नशे में होकर 'हाय पैसा, हाय पैसा' का जप करता रहता है। वह इसके लिए किसी भी सीमा तक जाने के लिए तैयार है। दरअसल यह सब 'सुख कहां है', इसको न समझने के कारण ही पैदा हुआ है। चूँकि वह 'एकान्त में बैठ नहीं सकता', अतः उसे समय ही नहीं मिलता कि वह अपने अन्दर झाँक कर देख सके। वहां झाकने में उसे भय भी लगता है। अतः वह अपने को बाहरी दुनिया में भुलाये रखने की चेष्टा करता है। इस प्रकार वह अपने को धोखा देने की चतुराई करता है। और यह विशुद्ध रूप से आत्मपलायन को संकेत है। इसका उदाहरण हमें शुतुरमुर्ग के उस कृत्य में दिखता है, जब वह बालू में अपनी गर्दन को घुसेड़ कर अपने को सुरक्षित समझता है।

वर्तमान समय में भोग-विलास की प्रधानता का असर इतना बढ़ गया है कि जीवन-स्तर के मूल्यांकन का यह मानक बन चुका है। पर क्या इससे तथाकथित समृद्ध देश के लोगों के आनन्द में वृद्धि हुई है? इसका उत्तर 'नहीं' में है। आज उन देशों में लूट, हत्या, आत्महत्या, बच्चों के द्वारा सहपाठियों की हत्या, बलात्कार आदि जैसी समस्या अपने विकराल रूप में है। टी. वी., शराब सिनेमा, बार, पार्टी के बिना वे एक क्षण भी नहीं रह सकते हैं। उन्हें एकान्त काटता है। इससे बचने के लिए वे नशे का सहारा लेते हैं। यह उनके लिए नयी बीमारियों को दावत देता है। इस प्रकार वह इनके मकड़जाल में इस कदर फँस जाता है कि उससे बाहर निकलने का प्रयास आत्मवंचना बन कर रह जाता है। और हम जानते है कि आत्मवंचना नैतिक पतन की पहली सीढ़ी है। अवसर आने पर यह आत्मवंचक परिवार, समाज, राष्ट्र सबाक वंचक हो जाता हैं।

गांधी मानव-जाति के इस पतन से दुखी थे इसीलिए उन्होंने अपनी बात 'अनेक रूपों मे, अनेक शब्दों में पुनरुक्ति दोष (कुछ लोगों को दिखाता है) मोल लेकर भी अच्छी तरह से स्थापित किया है। 'हिन्द स्वराज' में ही वह एक जगह लिखते हैं, ''पैसा मनुष्य को लाचार बना देता है। ऐसी दूसरी चीज विषय-भोग है। ये दोनों विषय विषमय हैं। उनका डंक साँप के डंक से ज्यादा जहरीला है। जब साँप काटता है तो हमारा शरीर लेकर हमें छोड़ देता है। जब पैया या विषय काटता है, तब वह शरीर, प्राण, मन (देह, मन और आत्मा) सब कुछ ले लेता है, तब भी हमारा छुटकारा नहीं होता।'' परिणाम स्पष्ट है। समृद्ध देश में स्नायविक अशांति सबसे अधिक है। इससे मुक्ति के लिए वे अब दूसरे रास्ते की तलाश में हैं, जिसका संकेत गांधी ने 'हिन्द स्वराज' में किया है, ''इसलिए हमारे पुरखों ने भोग की हद बांध दी।''

आधुनिक सभ्यता की एक और जबर्दस्त बुराई है, वह है यंत्रवाद और औद्योगिकीकरण। इसके लिए गांधी पर समय-समय पर आरोप भी लगाया जाता रहा कि वे यंत्रों के खिलाफ थे। परन्तु यह सब हिन्द स्वराज के 'स्पिरिट' को न समझ पाने के कारण ही है। कुबेरनाथ राय लिखते हैं, ''हमें उन बातों के पीछे अन्तर्निहित विचारधारा को देखना चाहिए। गांधी यंत्र नहीं, आधुनिक सभ्यता के सर्वग्रासी यंत्रवाद का विरोध कर रहे थे, भारी उद्योगों के विरोधी थे। स्वयं गांधी ने अपने को स्पष्ट करते हुए लिखा हैः ''मेरा विरोध यंत्रों से नहीं है, परन्तु यंत्रों के पीछे जो पागलपन है, उससे है।'' कहने की जरूरत नहीं कि यंत्र—समर्थकों के बड़े-बड़े दावे, जिनमें वे पृथ्वी के स्वर्ग बनाने की चाहत रखते हैं, कितने खोखले साबित हुए हैं। मूल्य—वृद्धि के साथ-साथ शोषण की भी वृद्धि हुई हैं, जिसकी वजह से इनकी पूंजी की भूख सदा विकासमान बनी रहती है। परिणाम स्वरूप केन्द्र से मनुष्य बेदखल होता चला जाता है। एक उदाहरण से असे आसानी से समझा जा सकता है—

हम जानते हैं कि वृहत्तर यंत्र-चालन के लिए बिजली की आवश्यकता होती है और बिजली पैदा करने के लिए बांध की जरूरत होगी। जब बांध बनेंगे तो मनुष्य विस्थापित होंगे। मतलब साफ है कि विकास तो दिख

रहा है, पर किसके बिना पर। ये बड़े-बड़े बांध, कल-कारखाने सभी तो पर्यावरण की ही कीमत पर स्थापित किये जाते हैं। इस प्रकार हम यह आसानी से देख पा रहे हैं कि इस यंत्र-उद्योग-क्रांति के कारण न केवल पर्यावरण का नैसर्गिक संतुलन नष्ट हुआ है, अपितु प्रदूषण भी खतरनाक स्थिति तक पहुंच गया है। विकासित देशों में शुद्ध जल, हवा, मिट्टी भी दुलर्भ होती जा रही है। धुआं, राख, रासायनिक कचरा तो था ही, अब 'ई-कचरा' तो सबका बाप बन कर उभरा है। प्रख्यात भौतिकविद् (Fritjof Capra) की टिप्पीणी देखनेलायक है—"Today, we are becoming apinfully aware that nuclear power is neither safe nor clean, nor cheap.... Even discounting the threat of a nuclear catastrophe, the global ecosystem and the further evolution of life on earth are seriously endangered and may well end in a large-scale ecological disaster."

कवियों को सब सुनाई (दिखाई) पड़ता है—'कवयः सर्वश्रुयः। गांधीजी कवि थे—उपनिषदों के अर्थ में। इसीलिए वे यत्र के बारे में निर्भ्रान्त होकर कह सकते थे, ''यंत्र तो दीमक का ऐसा बिल है, जिसमें एक नहीं, बल्कि सैकड़ों सांप होते हैं। एक के पीछे दूसरा लगा ही रहता है।'' गांधी की आशंका कितनी सही थी, यह कहने की जरूरत नहीं है। 'हिन्द स्वराज' में एक अन्य जगह अपनी बात को स्पष्ट करते हुए गांधी लिखते हैं, ''मशीनें यूरोप को उजाड़ने में लगी हैं और वहां की हवा अब हिन्दुस्तान में चल रही है। यंत्र आज की सभ्यता की मुख्य निशानी है और वह महापाप है, ऐसा तो मैं साफ देख सकता हूं।'' पिछले सौ वर्षों के विकास और विनाश का यदि हम तुलनात्मक अध्ययन करें तो हमें यह स्वीकार करना पड़ेगा कि सचमुच में यंत्र ने इस सभ्यता को विनाश पर ले जाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है।

''समय और श्रम की बचत मैं भी चाहता हूं, परन्तु वह किसी एक वर्ग की ही नहीं, पूरी मानव जाति की होनी चाहिए।'' जो यह कहकर कि यंत्र से समय और श्रम की बचत होती है, गांधी का विरोध करने की सोचते थे, हिन्द स्वराज में उन्हें निरुत्तर कर दिया गया। वे जानते थे कि 'यंत्रों के उपयोग के पीछे पेरक कारण श्रम बचाने का न होकर धन का लोभ है।' मनुष्य के बिना पर यंत्र उन्हें कतई स्वीकार्य नहीं थे। हां, यदि उसके पीछे सहयोग की भावना हो तो वे यंत्र को स्वीकार करने के लिए तैयार थे। बस वे यह चाहते थे कि यंत्र-विज्ञान आदि के उपयोग के पीछे लोभ न होकर प्रेम का भाव रहे। इसीलिए वे सिंगर मशीन की प्रशंसा करते हैं। वे कहते हैं ''अपनी पत्नी को सिंगर में सीने और बखिया लगाने के उकताने वाले काम करते देखा। पत्नी के प्रति प्रेम न गैरजरूरी मेहनत से उसे बचाने के लिए सिंगर को ऐसी मशीन बनाने की प्रेरणा दी।'' यंत्र की पैठ वह उतनी चाहते थे, जितनी कि आवश्यक है। यंत्र यदि व्यक्ति के काम को छीनकर पंगु बनाता है तो वह गांधी को स्वीकार्य नहीं।

वृहद यंत्र केन्द्रीकरण का साधन होता है। गांधी इससे परिचित थे। वे जानते थे कि मानव समाज की भलाई केन्द्रीकरण में है। यहां अधिक से अधिक हाथो को काम मिलता है। इससे व्यक्ति-विशेष के गुणों का लाभ समाज को मिलता है। उसके स्वयं के व्यक्तित्व में निखार आता है, जिससे पास-पड़ोस के लोगों को भी लाभ मिलता है। इसके विपरीत केन्द्रीकरण में शोषण की भूमिका चरम पर होती है। सन् 1928 में गांधी ने यंग इंडिया में लिखा था कि एक ही छोटे से द्वीप राज्य (इंग्लैंड) का आर्थिक साम्राज्यवाद आज सारे संसार को गुलामी की जंजीरों में जकड़े हुए है। यदि तीस करोड़ आदमियों का सारा राष्ट्र इसी तरह आर्थिक शोषण आख्तियार कर ले, तो वह टिड्डी दल की तरह संसार को चट कर जायेगा।'' बात साफ है। गांधी चाहते थे कि हर हाथ को काम मिले, न कि बेकारी है। इसी बात को अपनी काव्य-शैली में गांधी कहते हैं, ''मजदूरी मिले, इतना ही नहीं, परन्तु वे कर सकें तो ऐसा काम उन्हें हर रोज मिलना चाहिए।''

स्काटलैण्ड में हाथ के बुनाई-उद्योग के पतन पर खेद व्यक्त करते हुए बर्टेण्ड रसेल ने लिखा है, ''आजाद बुनकर विशाल, बीभत्स और अस्वास्थ्यकर मानव बाबियों की इकाई मात्र बन जाता है। फिर उनकी आर्थिक सुरक्षा का आधार उनकी अपनी कार्यकुशलता और प्राकृतिक शक्ति पर नहीं रहता, बल्कि कुछ बड़े संगठनों में विलुप्त हो जाता है, जिनमें एक निष्फल हो, तो सभी निष्फल हो जाते है।'' आगे चलकर शूमाखर ने भी अनुभव किया, ''लोग जहां रहते हों, वहीं उन्हें काम मिलना चाहिए। लोगों की अपनी परंपरागत जीवन-पद्धति, रहन-सहन, संस्कृति, मूल्यों आदि के साथ तकनालाजी का मेल बैठना चाहिए।...उत्पादन की प्रक्रिया सरल हो, जिससे बाहर के विशेषज्ञों पर अथवा बाजार पर निर्भर न रहना पड़े, उत्पादन मुख्यतः स्थानिक उपयोग के साथ सुसंगत होनी चाहिए। उसका स्वरूप सौम्य, अहिंसक, लालित्यपूर्ण एवं शोभनीय हो।'' रसेल हों अथवा शूमाखर या कोई अन्य मानवता-प्रेमी, सभी कहीं न कहीं 'हिन्द स्वराज' के मूल स्वर हो ही अपने देश, काल, पात्र के अनुरूप तान देते हैं।

आधुनिक समाज की एक और गंभीर बुराई की तरफ गांधी ने संकेत किया है। वह है स्वार्थपरकता। स्वार्थ की स्थिति यह है कि व्यक्ति अपनी लिप्सा की शांति के लिए किसी भी हद तक जा सकता है। सुबह से लेकर शाम तक किसी न किसी काम में जुटा रहता है। लेकिन यह जुटे रहना उसकी मानसिक अशांति का ही परिणाम होता है।

(क्रमशः अगले अंक में)

भूमि अधिग्रहण का सच

❑ मुकेश कुमार पाण्डेय /
अमित भूषण द्विवेदी

देश के लगभग 50 प्रतिशत किसान खेती छोड़ना चाहते हैं, क्योंकि कृषि आगतों की लागत में वृद्धि के कारण खेती घाटे का सौदा हो गयी है। किसान कर्ज में डूबे हुए हैं तथा कई राज्यों में किसान आत्महत्या तक करने को मजबूर हैं।

हाल के महीनों में 'भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास एवं पुनर्स्थापना संशोधन बिल' बहुत चर्चा में रहा है। भारत में भूमि अधिग्रहण सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक रूप से बहुत ही संवेदनशील मुद्दा है। वर्तमान में जिस तरीके से सत्ता पक्ष तथा विपक्ष के द्वारा इस संशोधन बिल के पक्ष तथा विपक्ष में तर्क रखे गये हैं, ऐसे में भूमि अधिग्रहण से संबंधित सामाजिक-आर्थिक पहलुओं पर विचार कर स्वतंत्र मूल्यांकन करना अनिवार्य हो जाता है। गौरतलब है कि भूमि अधिग्रहण के मामलों में पारदर्शिता लाने, जबरन भूमि अधिग्रहण को रोकने तथा अधिग्रहित भूमि के लिए भूस्वामियों को उचित मुआवजा दिलवाने के लिए पूर्ववर्ती यूपीए सरकार द्वारा भूमि अधिग्रहण अधिनियम 2013 में संशोधन के लिए वर्तमान केन्द्र सरकार द्वारा दिसंबर 2014 में एक अध्यादेश लाया गया। इस अध्यादेश के जरिये कई जरूरी उद्देश्यों के लिए किये जाने वाले भूमि अधिग्रहण के मार्ग में आ रही रुकावटों को दूर करने का प्रयास सरकार ने किया है। ऐसा सरकार का मानना है। इनमें दो मुख्य संशोधन इस प्रकार है। पहला, पांच महत्त्वपूर्ण उद्देश्यों—औद्योगिक गलियारों, पीपीपी (सार्वजनिक निजी भागीदारी) परियोजनाओं, ग्रामीण आधारभूत संरचना, सस्ती आवास योजनाओं तथा सुरक्षा के लिए भूमि अधिग्रहण के लिए 'सहमति संबंधी उपबंध' को अधिनियम से हटा दिया गया है। तथा दूसरा, इन पांच क्षेत्रों के लिए भूमि अधिग्रहण के लिए सामाजिक आंकलन प्रावधान भी हटा दिया गया है। विवाद के मुख्य मुद्दे यही दो संशोधन हैं विपक्ष का आरोप है कि यह संशोधन, किसानों के हित के विपरीत है तथा यह 1894 के अंग्रेजों द्वारा बनाये गये भूमि अधिग्रहण कानून से भी ज्यादा खराब है, क्योंकि यह संशोधन बड़े कॉरपोरेट घरानों के लिए किसानों से जबरन जमीन हथियाने का एक षड्यंत्र है। सत्ता पक्ष का तर्क है कि इस संशोधन में कहीं भी कुछ ऐसा नहीं है जो किसानों के हित के विपरीत है, बल्कि इससे किसानों की आर्थिक स्थिति के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास में मदद मिलेगी। ये तो विपक्ष तथा सत्ता पक्ष के अपने-अपने तर्क हैं। इन तर्कों का वास्तविक धरातल पर परीक्षण भी आवश्यक है और इसके लिए यह जानना आवश्यक है कि भूमि अधिग्रहण का औचित्य क्या है? यह किस प्रकार किसानों की तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार ला सकता है? भूमि अधिग्रहण के सम्भावित खतरे क्या हैं, पूर्व में भूमि अधिग्रहण से प्रभावित लोगों पर क्या प्रभाव पड़ा है तथा इस संबंध में उत्पन्न नीतिगत अंतर्विरोधों को कम करने के लिए एक जिम्मेदार एवं लोकतांत्रिक सरकार को क्या करने चाहिए?

भूमि अधिग्रहण का औचित्य

निःसंदेह किसानों की सहमति के बिना किसानों से जमीन अधिग्रहित करना लोकतंत्र की मूल भावना के विपरीत है। परंतु एक लोकतांत्रिक समाजवादी राज्य में सरकार का उद्देश्य यह भी होता है कि वह देश के आर्थिक विकास के साथ-साथ क्षेत्रीय असमानता तथा व्यक्ति से व्यक्ति के बीच बढ़ते सामाजिक एवं आर्थिक विषमता को दूर करने की दिशा में आवश्यक नीतियां बनायें तथा उसे सही ढंग से क्रियान्वित करने के लिए उपयुक्त माहौल बनाये। स्वतंत्रता के उपरांत से भारत ने अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में प्रभावशाली प्रगति किया है। परंतु यह प्रगति समावेशी नहीं है। आज भी अगर ग्रामीण क्षेत्र के विकास की बात की जाय तो क्षेत्रीय असमानता बहुत ज्यादा है। गांवों में मूलभूत सुविधाओं तथा आधारभूत संरचना का घोर अभाव है। रोजगार की तलाश में गांव से शहर की ओर पलायन बड़े पैमाने पर हो रहा है। ग्रामीण किसानों तथा खेतिहर मजदूरों की आय, स्कूल शिक्षक के वेतन का 1/10 हैं मीडिया रिपोर्टों तथा विभिन्न सर्वेक्षणों में यह बात सामने आयी है कि देश के लगभग 50 प्रतिशत किसान खेती छोड़ना चाहते हैं, क्योंकि कृषि आगतों की लागत में वृद्धि के कारण खेती घाटे का सौदा हो गयी है। किसान कर्ज में डूबे हुए हैं तथा कई राज्यों में किसान आत्महत्या तक करने को मजबूर हैं। गांवों में बिजली आपूर्ति की भयावह समस्या, पक्की सड़कों का अभाव, शिक्षा तथा स्वास्थ्य का लगातार गिरता हुआ स्तर, ये कुछ ऐसे जवलंत उदाहरण हैं, जिससे स्पष्ट है कि भारत के भू-भाग का एक बड़ा हिस्सा आर्थिक संवृद्धि के लाभ से वंचित है। सरकार का पक्ष है कि पिछले 65 वर्षों से गांवों का विकास परम्परागत नीतियों के द्वारा किया जाता रहा है, जो गांवों में सुविधाओं का प्रसार करने में असफल रहा है। यदि गांवों में विकास लाना है तथा किसानों एवं खेतिहर मजदूरों की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करना है, तो गांवों में औद्योगीकरण की ओर देखना होगा। इस भूमि अधिग्रहण के माध्यम से गांव में

अस्पताल, सड़क तथा स्वास्थ्य सुविधा, गरीबों के लिए आवास के लिए भूमि का बंदोबस्त करना आसान हो जायेगा। किसी भी प्रकार के भूमि अधिग्रहण के बदले किसानों को उचित मुआवजा मिलेगा तथा इन सुविधाओं तथा औद्योगीकरण के विस्तार से स्थानीय लोगों को रोजगार की प्राप्ति होगी। सरकार के अनुसार 2013 में यूपीए सरकार के द्वारा पारित अधिनियम, गांवों में औद्योगिक विकास तथा मूलभूत सुविधाओं, गरीबों के आवास व्यवस्था के लिए भूमि अधिग्रहण को हतोत्साहित करता है इसलिए, उन्हें यह संशोधन बिल लाना पड़ा है। इस प्रकार यह संशोधित बिल औद्योगिक विकास के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्र के विकास को भी सुनिश्चित करेगा।

यह निर्विवाद सत्य है कि देश में यदि रोजगार बढ़ाना है, गरीबी दूर करना है तथा किसानों एवं गांवों की स्थिति में सुधार लाना है तो देश में आर्थिक संवृद्धि दर में वृद्धि करने का प्रयास करना होगा। देश में राष्ट्रीय आय में तीव्र वृद्धि होने से ही सामाजिक सेवाओं, आधारभूत संरचना, गरीबी एवं बेरोजगारी उन्मूलन कार्यक्रमों आदि पर किये जाने वाले खर्च के अनुपात में वृद्धि होगी। आर्थिक सर्वेक्षण 2013-14 के अनुसार चूंकि अर्थव्यवस्था में प्रयुक्त कुल आगतों का 59.6 प्रतिशत अकेले औद्योगिक क्षेत्र से आता है। अतः अर्थव्यवस्था में संवृद्धि के पुनरुद्धार को प्राप्त करने के लिए औद्योगिक क्षेत्र की संवृद्धि दर में पोषणीय वृद्धि होना अति आवश्यक है। एक पक्ष यह है कि औद्योगीकरण के लिए भूमि अधिग्रहण अनिवार्य है अतः देश में विभिन्न परियोजनाओं की स्थापना के लिए भूमि अधिग्रहण करना समय तथा देश के विकास की मांग है। पर कहानी यहीं पर समाप्त नहीं होती है। यह तो इस विश्लेषण का सिर्फ एक पक्ष है। इसके आगे भी बहुत से प्रश्न उत्पन्न होते हैं। क्या वास्तव में इस संशोधन बिल का उद्देश्य भूमि अधिग्रहण के माध्यम से गांवों की दशा सुधारने की है तथा किसानों को रोजगार के माध्यम से उनकी आय में वृद्धि करने का है? कहीं ऐसा तो नहीं कि यह संशोधित बिल प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के महत्त्वाकांक्षी प्रोजेक्ट, 'मेक इन इंडिया' के लिए भूमि अधिग्रहण का रास्ता साफ करने के लिए लाया गया है? यदि ऐसा नहीं है तो सरकार को संसद तथा संसद के बाहर, इसका विवरण मजबूती से रखना होगा कि इस संशोधन बिल से किसानों को हानि नहीं होगा। परंतु यहां पर सरकार की मंशा संदेह से परे नहीं है? आर्थिक विकास साधन मात्र होता है, साध्य है मानवीय विकास। अतः भूमि अधिग्रहण से संबंधित नीति बनाते समय इस कानून के प्रभाव के मानवीय पहलुओं पर भी विचार कर इस बात का विश्लेषण आवश्यक है कि भूमि अधिग्रहण के संभावित खतरे क्या हैं तथा पूर्व में किये गये भूमि अधिग्रहण का अनुभव क्या रहा है?

भूमि अधिग्रहण के सम्भावित खतरे तथा पूर्व का अनुभव

भूमि अधिग्रहण से उत्पन्न सम्भावित खतरों का क्रमबद्ध विश्लेषण इस प्रकार है— प्रथम, भारत में कुल भूमि का लगभग 60 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि है तथा देश की लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या जीवन-निर्वाह के लिए कृषि पर ही निर्भर है। जिस प्रकार देश के मैदानी राज्यों में तीव्र जनसंख्या वृद्धि हो रही है तथा आवास आदि के लिए खेती योग्य जमीन का प्रयोग लगातार बढ़ता जा रहा है, परिणामस्वरूप कृषि योग्य जमीन में कमी आ रही है, क्या यह देश में खाद्य सुरक्षा के लिए गम्भीर चुनौती नहीं है? क्या उद्योगों के लिए खेती योग्य भूमि का अधिग्रहण इस चुनौती की गम्भीरता को और तीव्र नहीं करेगा? क्या भूमि अधिग्रहण के परिणाम स्वरूप होने वाला पर्यावरण क्षरण, समावेशी एवं पोषणीय विकास के लिए खतरा नहीं है? ये ऐसे प्रश्न हैं, जिनकी अनदेखी नहीं की जा सकती। द्वितीय, संशोधित कनून के लागू होने के बाद विद्यमान कानूनों पर भी विपरीत प्रभाव पड़ने की आशंका है। यदि संशोधन के बाद भूमि अधिग्रहण में तेजी आता है तो राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून 2013 खतरे में पड़ जायेगा। भारतीय जैविक विविधता अधिनियम 2002 में स्थानीय लोगों, जंगल में रहने वालों तथा जनजातीय किसानों के लाभों को सुरक्षित रखने की बात की गयी है। इस कानून पर भी विपरीत प्रभाव पड़ने की पूरी सम्भावना है।

तृतीय, भारत में भूमि पर अधिकारिता न केवल आर्थिक संबल का काम करता है बल्कि यह वंचित वर्गों, विशेषकर महिलाओं के सामाजिक तथा आर्थिक सशक्तीकरण को सुनिश्चित करने वाला एक महत्त्वपूर्ण कारक भी है। भूमि पर अधिकारिता महिलाओं की घर में तथा घर के बाहर निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदारी को बढ़ाता है, तथा उनकी मान-मर्यादा में वृद्धि करता है। यह सीधे-सीधे महिलाओं के कल्याण में वृद्धि को सुनिश्चित करता है। प्रो. बीना अग्रवाल (1994) ने दक्षिण एशियाई देशों के अपने अध्ययन में पाया है कि दक्षिण एशिया में महिलाओं की सामाजिक तथा आर्थिक वंचना का महत्त्वपूर्ण कारण उनकी भूमि पर अधिकारिता का न होना है। स्पष्ट है कि जबरन भूम अधिग्रहण उन महिलाओं के कल्याण में कमी लायेगा, जिनकी भूमि अधिग्रहीत की जायेगी। कोलिंस (2011) तथा उनके साथियों ने भी अपने अध्ययन में यह पाया है कि भारत, श्रीलंका तथा बांग्लादेश के ग्रामीण क्षेत्रों में भूमि पर अधिकारिता गरीब परिवारों के लिए एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक साधन होता है।

चतुर्थ, हमारे देश में भूमि, लोगों की भावनाओं तथा आत्मसम्मान से जुड़ा है। सरकार कानून बनाते समय भूमि की प्रत्यक्ष लागत का अनुमान लगाकर उसकी भरपाई की व्यवस्था कर सकती है। पर क्या भूमि से वंचित होने की अप्रत्यक्ष लागत की भरपाई सरकार कर सकती है? क्या यह सोचने की

जरूरत समझी जाती है कि भूमि से बेदखल व्यक्ति अपने भूमि एवं घर से बेदखल होकर किसी और जगहर पुनर्वासित किया जाता है तो उसे अपने परिवार को पुनः स्थापित करने में किन शारीरिक एवं मानसिक यातनाओं का सामना करना पड़ेगा? पुनर्वासन शिविरों में उनकी बहू-बेटियों के साथ गलत व्यवहार नहीं होगा, इसको कौन सुनिश्चित करेगा? क्या कोई सरकार इसको आज तक रोक पायी है? उत्तर नकारात्मक ही हो सकता है।

पांचवां, एक ऐसे देश में जहां 80 प्रतिशत से अधिक छोटे एवं सीमांत किसान हैं, जहां अभी भी भूमि सुधारों को देश के सभी राज्यों में पूरी तरह से लागू नहीं किया गया है, ऐसे में किसानों की मर्जी के खिलाफ भूमि अधिग्रहण करना कहां तक न्यायसंगत होगा? ये छोटे और सीमांत किसान अधिकतम जोखिम की श्रेणी में आते हैं। एक छोटा-सा मानसूनी परिवर्तन भी इनकी आर्थिक स्थिति को भारी नुकसान पहुंचाता है। उदाहरण के लिए फरवरी-मार्च के महीने में देश के कई हिस्सों में बेमौसम बारिश के कारण फसल नुकसान होने पर किसानों के आत्महत्या करने की बातें सामने आ रही हैं। भूमि अधिग्रहण से छोटे एवं सीमांत किसान सबसे ज्यादा प्रभावित होंगे, क्योंकि खेती योग्य ऑपरेशनल होल्डिंग में 60 प्रतिशत से अधिक भागीदारी इन्हीं की है। विभिनन शोधों से यह सिद्ध हो चुका है कि बड़े जोतों की तुलना में छोटे जोतों की प्रति हेक्टेयर खाद्यान्न उत्पादकता अधिक होती है, अतः इस दृष्टि से भी इस प्रकार का भूमि अधिग्रहण देश में खाद्यान्न उत्पादन के समक्ष एक गम्भीर चुनौती प्रस्तुत करेगा।

अंतिम पर सबसे महत्तवपूर्ण किसानों की सहमति के बगैर उनसे जमीन का अधिग्रहण करना हिंसा तथा वर्ग-संघर्ष को जन्म देगा। पूर्व में प. बंगाल, उत्तर प्रदेश तथा देश के अन्य राज्यों में जबरन जमीन अधिग्रहण को लेकर किसानों ने आंदोलन किया तथा पुलिस के साथ उनकी झड़प में सैकड़ों किसान मारे जा चुके हैं। निश्चित तौर पर किसानों की सहमति वाला उपबंध हटाना भविष्य में इस प्रकार की हिंसा में वृद्धि करेगा तथा देश में शासक तथा शासित के बीच वर्ग-संघर्ष को बढ़ावा देगा। उदाहरण के लिए देश के कई राज्यों में नक्सलवाद की समस्या का मूल कारण भूमि का अन्यायपूर्ण वितरण ही है।

ऐसा नहीं है कि ये सम्भावित खतरे आशंका मात्र हैं। ये सब बातें आनुभाविक प्रमाणों तथा विभिन्न विद्वानों के अध्ययन पर आधारित है। पूर्व में किये गये भूमि अधिग्रहण के परिणामों के साथ इन आशंकाओं का गहरा संबंध है। उदाहरण के लिए कुछ वर्षों पहले झारखण्ड राज्य के लातेहार जिले के चंदवा ब्लाक में अभिजीत ग्रुप तथा एस्सार ग्रुप के द्वारा पावर प्लाण्ट लगाने के लिए किसानों से भूमि अधिग्रहीत किया गया था। इस उम्मीद में की प्लाण्ट के लगने से स्थानीय लोगों को रोजगार मिलेगा तथा क्षेत्र का विकास होगा, किसान अपनी जमीन देने को तैयार हो गये। बहुत से किसानों ने उत्साहित होकर बैंकलोन के माध्यम से ट्रैक्टर-ट्राली खरीद लिया ताकि जब प्लाण्ट में काम शुरू होगा तो वे अपने ट्रैक्टर-ट्राली को भाड़े पर देकर पैसा कमायेंगे। परंतु कोल आवंटन में धोखाधड़ी के आलोक में सुप्रीम कोर्ट के द्वारा आवंटन रद्द करने के कारण वो पॉवर प्लाण्ट बंद पड़े हैं। युवा बेकार बैठे हैं। सबसे बड़ी मुसीबत उन लोगों के लिए आ गयी है, जिन्होंने बैंक से उधार लेकर ट्रैक्टर-ट्राली खरीदा था। अब वे ऋण के जाल में फंस चुके हैं तथा कर्ज चुकाने में असमर्थ हैं। अतः स्पष्ट है कि ऐसे किसान जिनकी भूमि अधिग्रहीत की गयी, उनके लिए इस प्रकार के ऋण की व्यवस्था बहुत ही कम दर पर की जानी चाहिए थी। चाहे 2013 का अधिनियम हो अथवा वर्तमान संशोधित बिल दोनों में ही इस प्रकार के प्रावधान का अभाव है जो सरकार की नीतिगत अदूरदर्शिता तथा असंवेदनशीलता को दर्शाता है। ऐसा नहीं है कि प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी को चंदवा के इन लोगों की समस्याओं का ज्ञान नहीं है। झारखंड विधानसभा चुनाव 2014 के चुनाव प्रचार के दौरान श्री नदेन्द्र मोदी ने अपने चुनावी भाषण में इस बात का आश्वासन दिया था कि यदि उनकी सरकार सत्ता में आती है तो चंदवा के बंद पड़े प्लाण्टों को शुरू करवायेगी। आखिर जब गरीब किसान, देश के विकास के लिए हानि उठाने को तैयार हैं, तो सशक्त सरकार अपने देश के गरीब किसानों के लिए हानि उठाने को क्यों नहीं तैयार है?

फरवरी महीने के आखिरी सप्ताह में देश भर के कई इलाकों से गरीब आदिवासी और किसान अध्यादेश के विरोध में आंदोलन करने के लिए दिल्ली के जंतर-मंतर पर एकत्रित हुए। इस प्रदर्शन में तमिलनाडु, ओडिशा, छत्तीसगढ़, बिहार और मध्य प्रदेश सहित देश के लगभग सत्रह राज्यों से आये किसान और आदिवासी लोग शामिल थे। कई तरह की विकास परियोजनाओं से विस्थापित हुए इन आदिवासियों और किसानों का आरोप है कि लाखों हेक्टेयर खेतीहर जमीन और वन भूमि उद्योगों के लिए अधिग्रहित की गयी। उसके बदले में जो मुआवजा मिला वह बहुत ही कम था। यह लोग भूमि अधिग्रहण अध्यादेश का विरोध कर रहे थे। शहडोल (मध्य प्रदेश) से आये मंगलवीर सिंह के अनुसार ''मेरी जमीन पर 2008 से बांध बनाया गया, मगर आज तक मुआवजा नहीं मिला, आज मेरे पास जीने-खाने का कोई स्रोत नहीं है।'' मध्य प्रदेश के ही रहने वाले एक अन्य व्यक्ति की भी ऐसी ही कहानी है। इनके अनुसार ''वन विभाग ने साल 2000 में हमें अपने गांव से विस्थापित करते समय आश्वासन दिया था कि खेतिहर जमीन के बदले हमें अच्छी जमीन मिलेगी। मगर उसके बदले उन्होंने बंजर जमीन दे दी। अब हमारे सामने सबसे बड़ा सवाल है कि किस तरह अपने परिवार को चलायें। हम किसान थे, आज दिहाड़ी मजदूर बन गये हैं।'' (प्रस्तुत अंश बी.बी.सी. हिन्दी के वेबसाइट (24 फरवरी, 15) से लिया गया है।) *...क्रमश अगले अंक में*

श्रम की निर्विवाद महत्ता

❑ शुभू पटवा

हमारे समाज का यह दुर्भाग्य ही रहा है कि शरीर श्रम को आज भी दोयम ही माना जाता रहा है। यंत्रों के अपरिमित उपयोग के पीछे का यह भी एक कारण है।

यह समझना निरी भूल है कि श्रम केवल शरीर से ही होता है। मानसिक श्रम भी श्रम है। यह श्रम विलास नहीं है। परंतु महात्मा गांधी ने शरीर श्रम को जो महत्त्व दिया और उसे अपने एकादश व्रत में जोड़ा तो ऐसा उन्होंने शरीर श्रम को प्रतिष्ठा प्रदान करने के लिए ही किया होगा। उन्हें मानसिक श्रम और शरीर श्रम के मध्य किसी तरह की होड़ नहीं करनी थी। गांधीजी ने यह इसलिए भी किया होगा कि शरीर श्रम की महत्ता दोयम दर्जे की न मानी जाए। दोनों का अपना अपना महत्त्व है। दोनों प्रतिस्पर्धी नहीं बल्कि एक दूसरे के पूरक हैं एवं समतुल्य हैं।

हमारे समाज का यह दुर्भाग्य ही रहा है कि शरीर श्रम को आज भी दोयम ही माना जाता रहा है। यंत्रों के अपरिमित उपयोग के पीछे का यह भी एक कारण है। छोटे से छोटे स्तर पर जहां यंत्रों का बेहिसाब उपयोग होता है वहां नमबुद्धि का काम है और न शरीर की क्षमता का। एक बार यंत्र को चाहे अनुसार स्थिर करके निश्चिन्त हुआ जा सकता है। उस यंत्र से फिर जो भी निकलेगा वह वांछित हो या न हो उस पर किसी का काबू नहीं है। मिसाल के तौर पर कपड़े धोने की मशीन को लें या चाहे तो रसोई में काम आने वाली मिक्सी ले लें। कपड़े का कोई दाग छूटा या नहीं मशीन को इससे कोई सरोकार नहीं ठीक यही बात मिक्सी की है। वह कम, अधिक मोटा या बारीक खुद कहां तय कर पाती है। जो डाला गया है उसे पीस कर मशीन को निकाल देना है। वह मोटा है या बारीक कोई सुघड़ नारी यदि बीच बीच में जांच ले तो बात अलग है पर मिक्सी या चक्की का इन बातों से कोई सरोकार नहीं।

गांधीजी के बारे में कहा जाता है कि वह यंत्र विरोधी थे। वे केवल उन यंत्रों के विरुद्ध थे जो मनुष्य की नैसर्गिक श्रम क्षमता का ह्रास करते हैं। वैसे तो गांधीजी ने चश्मा, घड़ी और चरखा को भी यंत्र ही माना है। वे उबाऊ शरीर श्रम के विरोधी थे। इसीलिए सिलाई मशीन के विरोधी वे नहीं थे। क्या इन सबके उपयोग में केवल शरीर श्रम ही लगता है बुद्धि नहीं। सिलाई की मशीन से कपड़ा सिलना क्या कला नहीं है? आपका मन और बुद्धि दोनों जब तक एक साथ जुड़ी न हो और मशीन चलाने की शरीर क्षमता जब तक न आ जाए तब तक क्या कपड़ा सिला जा सकता है? इस तरह शरीर मन और बुद्धि का अनूठा तादात्म्य हम इसमें देख सकते हैं। गांधीजी ऐसे यंत्रों के कभी विरोधी नहीं रहे।

एक बोध कथा है कि किसी सम्पन्न व्यक्ति के बगीचे का माली बड़ी सतर्क दृष्टि और पूरी तन्मयता से बगीचे की देखभाल करता है। बगीचे का मालिक भी उसके कामकज से बड़ा संतुष्ट रहता है। हरे भरे बगीचे से खुश मालिक माली से बाग में अंजीर का पौधा लगाने की इच्छा प्रकट करता है। मालिक की इच्छानुसार माली अंजीर का पौधा रोप देता है। समय के साथ पौधा पेड़ बन जाता है। पर मालिक की इच्छा तो पेड़ से फल प्राप्त करने की होती है। जो पूरी न होने से मालिक निराश हो जाता है। क्षुब्ध हुआ मालिक बगीचे के रखवाले अपने माली से कहता है कि इस पेड़ ने तो एक भी फल नहीं दिया और निरर्थक जमीन घेर ली है। अंजीर के इस पेड़ की क्या जरूरत है इसे हटा दो, काट डालो। माली के धैर्य की यह परीक्षा ही था। माली बोला मालिक एक साल और रहने दीजिए। मैं थोड़ी कोशिश और कर लेता हूं शायद आपकी आशा फलवती हो जाए। माली की ईमानदानी, काम के प्रति लगन और समझ के आगे मालिक की सहमति स्वाभाविक थी। माली ने उस पेड़ की परवरिश पर कुछ अधिक धन दिया। खाद पानी का पूरा खयाल किया। साल भर बीतते उसमें फल आने लगे।

यह कहानी एक ओर जहां माली के श्रम का प्रतिफल बताती है वहीं उसकी समझ और बुद्धि की झलक भी देती है। बगीचे का मालिक नहीं जानता था कि फल कब लगते हैं। कब कैसा और कितना खाद-पानी दिया जाना चाहिए। मालिक की समझ और बुद्धि अपनी जगह महत्त्वपूर्ण है और उसे उसका सिद्धहस्त भी माना जा सकता है। पर उस माली की समझ और बुद्धि ही अंजीर के पेड़ से फल प्राप्त करने में कामयाब हो सकी। यह बात हमें स्वीकार करना चाहिए। यह बोध कथा हमें यह मानने को विवश करती है कि शरीर श्रम, मन और बुद्धि ऐसे मिले जुले युग्म हैं कि किसी एक का नहीं पूर्ण युग्म की महत्ता ही इसमें निहित है। श्रम शरीर और मन के साथ ही उपर्युक्त बोध कथा हमें धैर्य की सीख भी देती है। कोई भी श्रम निरर्थक नहीं होता। पर उसके अपेक्षित फल सदा धैर्य में ही निहित हैं।

हम जानते हैं कि यंत्र का संचालन कभी उसकी अपनी समझ से नहीं होता। संचालन तो कोई हाथ ही करता है। यानी कि मनुष्य ही उसे संचालित करता है। यंत्र के संचालित होने के बाद ही वह चलता है पर अपनी समझ से नहीं बेसमझी से। समझ मनुष्य के मस्तिष्क में ही होती है। गरज यह कि मस्तिष्क से बड़ा कोई यंत्र नहीं और मस्तिष्क मनुष्य के ही पास है। मनुष्य के ही पास दो हाथ और दो टांगे हैं जो शरीर श्रम के प्रतीक हैं। स्पष्ट है कि इन तीनों के तालमेल से होने वाला श्रम ही सार्थक श्रम है। जो यंत्र इस तालमेल को बिगाड़ते हैं वे न श्रम की महत्ता बढ़ाते हैं और न इस प्रकृति के संपोषक हो सकते हैं। केवल विलास के पोषक हैं। इसीलिए गांधी के ग्यारह व्रतों में शरीर श्रम को एक माना गया कि विलास बेकाबू न हो। आज इसी के बेकाबू हुए जाने→

पर्यावरण

अनमोल पेड़ों का मोल

❑ डॉ. ओ. पी. जोशी

केन्द्र में एन. डी. ए. सरकार के एक वर्ष पूर्ण होने पर केन्द्रीय वन व पर्यावरण मंत्री प्रकाश जावडेकर ने अपने मंत्रालय की उपलब्धियों की जानकारी देते समय यह कहा कि सरकार मौजूदा वन कानून में संशोधन कर पेड़ काटने पर जुर्माना राशि बढ़ायेगी। वर्तमान में यह राशि मात्र एक हजार रुपये है। आजादी के बाद हमने कई क्षेत्रों में अंग्रेजों के बनाये कानून यथावत ही मान लिये। वन कानून के संबंध में भी शायद यही हुआ। अंग्रेजों के लिए वृक्ष का मतलब केवल लकड़ी या काष्ठ था। सम्भवतः लकड़ी का तात्कालिक बाजार भाव के अनुसार यह जुर्माना तय किया होगा। तब सस्ता जमाना था एवं नौकरियों में लोगों को सौ-दो सौ रुपये मासिक वेतन मिलता था।

इस सस्ते जमाने में एक हजार रुपये की राशि काफी बड़ी एवं भारी लगती थी। इसीलिए पेड़ों का काटना काफी कम होता था। उस समय पर्यावरण विज्ञान एवं पारिस्थितिकी (इकोलॉजी) भी अपने प्रारंभिक चरण में थे। विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों की जानकारी उस समय भी प्राप्त थी। वनों एवं पेड़ों के पर्यावरणीय योगदान के संदर्भ में ज्यादा शोध, सर्वेक्षण एवं अध्ययन आदि तक तक नहीं हुए थे, या कम हुए थे या उनकी जानकारी प्रचार माध्यमों से लोगों तक नहीं पहुंची थी। संभवतः देश में पहली बार जनवरी 1987 में वाराणसी में आयोजित भारतीय विज्ञान कांग्रेस के सम्मेलन में कलकत्ता वि. वि. के प्रो. टी. एम. दास ने अपने अध्ययन के आधार पर बताया था कि एक पचास वर्षीय पेड़ अपने जीवनकाल में 15 लाख 70 हजार रुपये की सेवा प्रदान करता है। इन सेवाओं में प्राणवयु देना, ताप नियंत्रण करना, भूमि कटाव रोकना व उपजाऊपन बढ़ाना, पशुओं को प्रोटी एवं वायु प्रदूषण को कम करना आदि शामिल थे। डॉ. दास की यह गणना भी लगभग तीन दशक पुरानी है। वर्ष 1987 से अब तक महंगाई कई गुना बढ़ गयी है एवं इस आधार पर यह सेवा एक करोड़ रुपये की है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि अमिताभ बच्चन के प्रसिद्ध कार्यक्रम कौन बनेगा करोड़पति की हाट सीट पर बैठे बगैर ही पुराने पेड़ करोड़पति हैं।

पर्यावरण पर फिल्म बनाने वाले माइक पांडे का तो स्पष्ट कहना है कि एक पेड़ यानी एक करोड़। बायोवेद शोध संस्थान इलाहाबाद के एक अध्ययन के अनुसार एक मनुष्य को वर्ष भर में लगभग 55000 लीटर प्राणवायु (ऑक्सीजन) की जरूरत होती है। 150 रुपये प्रति लीटर के मूल्य से प्राणवायु की कीमत जोड़ी जाये तो यह 82 लाख रुपये से ज्यादा होती है। इसका तात्पर्य यह है कि केवल प्राणवायु देकर ही एक पेड़ करोड़पति होने के नजदीक है। पेड़ों की पर्यावरण में प्रदान की जाने वाली ये सेवाएं मौसम के अनुसार थोड़ी बहुत बदलती रहती है। पेड़ों की पर्यावरण में प्रदान की जाने वाली ये सेवाएं मौसम के अनुसार थोड़ी बहुत बदलती रहती हैं। पतझड़ी वृक्षों में पत्तियों के झड़ने के साथ ही यह सेवा न्यूनतम हो जाती है। सदाबहार पेड़ों में यह सेवा वर्ष भर लगातार समान रूप से चलती रहती है। धूल प्रदूषण भी पर्यावरणीय सेवाओं को थोड़ा प्रभावित करता है। धूल के महीन कण पत्तियों की सतह पर जमा होकर गैसों का आदान प्रदान एवं वाष्पोत्सर्जन को कम कर देते हैं। पेड़ या पेड़ों के कटते ही उनकी पर्यावरणीय सेवाएं समाप्त हो जाती हैं। पर्यावरणीय सेवाओं का जितना मूल्य, कटने पर उतनी ही हानि। वर्तमान में एक पुराना पेड़ काटने पर एक करोड़ की हानि। अमेरीकी वन सेवा के न्यूयार्क स्थित शोध संस्थान के प्रोजेक्ट डायरेक्टर प्रो. डेविड नोवक के अनुसार एक बड़ा पुराना पेड़ छोटे नये पेड़ की अपेक्षा ज्यादा पर्यावरणीय सेवा प्रदान कर 75 से 80 प्रतिशत प्रदूषण नियंत्रण की क्षमता रखता है। जून 2015 मं दिल्ली सरकार ने भी अपनी केबिनेट बैठक में पेड़ हटाने की राशि 28000 से बढ़कार 34500 रुपये प्रति पेड़ करने की मंजूरी दी है। यह कार्य 1994 के पेड़ बचाओ अधिनियम के तहत किया गया है। इसमें यह सुविधा भी दी गयी है कि हटाये गये पेड़ को दूसरी जगह रोपित करने पर 15000 रुपये की राशि वापस की जायेगी।

पर्यावरणीय मूल्यों को जोड़कर यदि पेड़ काटने की राशि निर्धारित की जाती है तो यह काफी जयादा होगी एवं इसका बहुत विरोध भी होगा। लकड़ी के बाजार मूल्य के आधार पर जुर्माना राशि तय की जा सकती है। वैसे राशि इतनी तो होना ही चाहिए कि काटने वाला इस बारे में सोचे एवं उसके मन में एक बार यह विचार आये कि इससे तो अच्छा है कि पेड़ को बचा लिया जाए। ❑

→का दंश यह जगत झेल रहा है।

भगवान महावीर ने जिन पांच महाव्रतों की बात की है उनके दो सूत्र अहिंसा और अपरिग्रह हैं। ये दोनों सूत्र किसी भी स्तर पर शोषण का निषेध करते हैं। शोषण न करना प्रकारांतर से श्रम की प्रतिष्ठा करना ही है। जैन मत का विश्वास पुरुषार्थवाद में है। आचार्य श्री महाप्रज्ञजी तो यहां तक मानते रहे हैं कि मनुष्य ने जिन सचाइयों का पता लगाया है वह सब मानवीय श्रम और पुरुषार्थ के द्वारा ही हुआ है। वे तो यहां तक कहते हैं कि श्रम निष्ठा का सिद्धांत जीवनशैली का मुख्य अंग होना चाहिए। विश्व श्रम दिवस पर दुनिया भर के मजदूरों के एक कोने की आवाज उठती है। यह आवाज इस रूप में भी उठनी चाहिए कि हमारी जीवनशैली का मुख्य अंग श्रमनिष्ठा ही होगा। यही आज के वक्त का तकाजा है। ❑

वैश्विक परिदृश्य

ग्रीस : लोकतंत्र में गरिमा की वापसी

❑ फारुक चौधरी

हाल ही में सम्पन्न जनमतसंग्रह में बड़ी संख्या में 'नहीं' के चुनाव ने जतला दिया है कि ग्रीस के लोग महान निर्णय लेने में सक्षम हैं। यह दर्दनाक संघर्ष कई वर्षों से चल रहा था। ऋणदाताओं ने कई बार वस्तुतः ग्रीस पर शर्मनाक तरीके से शासन भी किया। लेकिन 5 जुलाई को ग्रीस के लोगों ने शानदार निर्णय देते हुए कहा कि हम ऋणदाताओं को अपने पर हुक्म नहीं चलाने दे सकते।

अपने निर्णयात्मक जयघोष के साथ क्रूर ऋणदाताओं को 'नहीं' कहते हुए ग्रीस के नागरिक गरिमा के साथ लोकतंत्र के पक्ष में खड़े हुए। यह लोगों की, लोकतंत्र की और गरिमा की विजय हैं यह नागरिकों की उन नृशंस व बर्बर बैंकरों पर विजय है जो ग्रीस का खून चूस कर उसे सफेद बना देना चाहते थे। यह अतिमितव्यता, गरीबी और सार्वजनिक सम्पत्तियों की लूट के खिलाफ फैसला है। हाल ही में सम्पन्न जनमतसंग्रह में बड़ी संख्या में 'नहीं' के चुनाव ने जतला दिया है कि ग्रीस के लोग महान निर्णय लेने में सक्षम हैं। यह दर्दनाक संघर्ष कई वर्षों से चल रहा था। ऋणदाताओं ने कई बार वस्तुतः ग्रीस पर शर्मनाक तरीके से शासन भी किया। लेकिन 5 जुलाई को ग्रीस के लोगों ने शानदार निर्णय देते हुए कहा कि हम ऋणदाताओं को अपने पर हुक्म नहीं चलाने दे सकते।

यह राजनीति के लिए एक सबक है और इसके विश्वव्यापी राजनीतिक निहितार्थ होंगे। देश के बेशरम राजनीतिक नेता शायद इससे सबक नहीं लेंगे। परन्तु विभिन्न देशों के नागरिक और उनके वास्तविक नेता इससे सीख लेंगे कि लोगों को प्रेरित करो, लोकतंत्र एवं गरिमा का संदेश फैलाओ और शक्तिशाली हितों के समक्ष घुटने मत टेको। बाजारों के सामने अब संकट के क्षण आने वाले हैं। बी. बी. सी. के आर्थिक संपादक राबर्ट पेस्टन ने लिखा है, ''कल का दिन (6 जुलाई) बाजारों के लिए अत्यन्त रोंगटे खड़े कर देने वाला दिन होगा। बाजार किंकर्तव्य-विमूढ़ होगा और वह उपहास का पात्र भी होगा।'' यह बैंकरों और केन्द्रीय बैंकों के लिए अनिश्चितता के क्षण भी होंगे। ग्रीस के बैंकों एवं अर्थव्यवस्था के सामने अनेक महत्त्वपूर्ण प्रश्न हैं। इनके आर्थिक और वित्तीय हाल भी निकालने होंगे। ऋणदाताओं से संघष्र की यह घटना ऐतिहासिक है। ऋणदाताओं द्वारा पूरे यूरोप में अनेक देशों में अतिमितव्ययता की अपनी प्रणाली थोपने के बरस्क ऐसे राजनीतिक संघर्ष का अनुभव पहले नहीं हुआ था।

अतएव 'नहीं' वाले इस निर्णय ने यूरोजोन के नेताओं के समूह को क्रोध में ला दिया है। ऋणदाता, उनका मीडिया और उनके बुद्धिजीवी जनमतसंग्रह की घोषणा के साथ ही भ्रम फैला रहे थे और लोगों को डरा धमका रहे थे। यूरो नेताओं के समूह ने अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष की उस रिपोर्ट की जारी करने से रोकने का प्रयास भी किया, जिसके अनुसार ग्रीस के ऋण टिकाऊ नहीं है। ऋणदाता जनमतसंग्रह की वैधानिकता पर भी प्रश्न उठा रहे हैं। उन्होंने तो मतपत्र की प्रश्नावली पर ही प्रश्न उठा दिए। ग्रीस के भूतपूर्व वित्तमंत्री यानिस वेरौफकिस ने तो यूरोजोन की रणनीति को 'आंतकवाद' की संज्ञा दी है। यूरोपीय अधिकारियों ने खुले तौर पर ग्रीस के लोगों से 'हां' के पक्ष में मतदान की अपील की थी। यूरोपीय संसद के अध्यक्ष मार्टिन शुल्ज़ ने कहा था, ''मुझे उम्मीद है लोगा 'हां' कहेंगे। जनमतसंग्रह के बाद यदि बहुमत 'नहीं' के पक्ष में आता है तो उन्हें नई मुद्रा जारी करना पड़ेगी क्योंकि ग्रीस को भुगतान के माध्यम के रूप में यूरो उपलब्ध नहीं होगी। यह एक राष्ट्र के नागरिकों के सार्वभौम अधिकारों में सीधा हस्तक्षेप और खुली धमकी भी है। क्रगमेन का कहना है, 'जनमतसंग्रह के पहले ग्रीस की जनता को वास्तव में डराने धमकाने का प्रयत्न सिफर्ठ इसलिए नहीं किया गया कि वे ऋणदाताओं की मांगें ही मानें बल्कि अपनी वर्तमान सरकार से भी छुटकारा पा लें। यह आधुनिक यूरोपीय इतिहास का एक शर्मनाक क्षण है और अगर यह सफल हो जाता तो एक गंदी परम्परा कायम हो जाती।

दानदाताओं की लोकतंत्र के साथ ऐसी हरकत दिखाती है कि उनकी लोगों की सहभागिता वाले लोकतंत्र में कोई आस्था नहीं है। इस वजह से ग्रीस के नागरिकों की यह राजनीतिक लड़ाई अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वित्तमंत्री वेरौफकिस के अनुसार, ''मुझसे कठोरता से कहा गया कि हम जो कदम उठा रहे हैं वह अत्यन्त विचित्र और असंगत है। आप इतने जटिल मसले को आम आदमी के सामने रखने का दुस्साहस कैसे कर सकते हो?'' ऋणदाताओं का व्यवहार दर्शाता है कि वे न तो सामान्य लोगों का, न करदाताओं जो कि अफसरशाही के वास्तविक नियोक्ता हैं, का सम्मान नहीं करते। अतएव ग्रीस के लाखों 'सामान्य लोगों' ने ऋणदाताओं को अपना निर्णय सुना दिया। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि उनका देश सामान्य लोगों का ही है। वैरोफकिस का मानना है कि 'नहीं' पर पड़ा मत लोकतंत्र और सामाजिक न्याय के पक्ष में है और यह ग्रीस के आसपास जड़े लौह शिकंजे को तोड़ता भी है। यह लोकतांत्रिक यूरोप की ओर बढ़ा एक कदम है। बैंकों को बंद कर वह ग्रीस के नागरिकों को लज्जित करना चाहते थे। ग्रीस के लोगों का उठ खड़ा होना दुनियाभर के उन राष्ट्रों और व्यक्तियों के लिए उदाहरण है जिनके साथ ऐसा लज्जाजनक व्यवहार किया जा रहा है।

इस 'नहीं' ने यूरोपीय संघ के नेताओं को आकस्मिक बैठक के लिए मजबूर कर दिया है। जर्मनी का मानना है कि ग्रीस को मुद्रा यूरो से दूर कर दिया जाए क्योंकि एथेंस

ने समझौते के सभी रास्ते बंद कर दिये हैं। यही एक वर्ग का मानना है कि नागरिकों की अवहेलना अब शासकों को भारी पड़ेगी। इतना ही नहीं जर्मनी की दो महाकाय कंपनियों ने तो सार्वजनिक तौर पर यह घोषणा कर दी है कि 'नहीं' मत ने साझा मुद्रा की जड़ें हिला दी हैं। अतएव अब ग्रीस को यूरोपीय संघ छोड़ना ही पड़ेगा। यानी लोगों को उनके जीवन को निर्धारित करने के संबंध में प्रश्न पूछने का कोई अधिकार नहीं है और यदि लोग कुछ तय कर भी लेते हैं तो ताकतवर समझौते को आगे नहीं आयेंगे। यह पूर्णतया जनविरोधी रवैया है। ग्रीस के नागरिकों द्वारा जनमतसंग्रह का उपयोग लोकतंत्र के लिए महत्त्वपूर्ण है। यदि लोग अपनी राजनीति को दिशा दे पाने में असफल होंगे तो वे अपनी अर्थव्यवस्था को दिशा दे पाने में भी असफल होंगे।

इस मजबूत 'नहीं' ने पूंजीवाद के दोषों को भी उजागर कर दिया है। मुख्य धारा के विद्वानों के एक समूह के अनुसार 'नहीं' के पक्ष में पड़े मत ने यूरोपीय संघ की नींव हिला दी है। सच है कि विश्वसनीयता पूंजी की मदद व चिन्ता करती है। इस प्राप्त करने के लिए वह अनेक मनगढ़ंत कहानियां गढ़ती है। ग्रीकएक्जिट (ग्रीस की निकासी) ग्रीस का चयन नहीं है। जर्मनी के उप चांसलर सिगमरे ग्रेब्रिअल का कहना है ''ग्रीस के प्रधानमंत्री एलेक्स सिप्रास ने यूरोप और ग्रीस के बीच के उस अंतिम पुल को भी तोड़ दिया है जिसे लांघकर किसी समझौते पर पहुंचा जा सकता था। ग्रीस को यूरोपीय संघ से निकालना आसान नहीं है, इसलिए उन्हें उससे समझौता तो करना ही होगा। उम्मीद है आने वाले दिनों में परिस्थितियां बदलेंगी और लोग सीखेंगे।

अपना मत देने के पहले प्रधानमंत्री सिप्रास ने जो कहा वह लोकतंत्र के लिए एक संदेश है। उन्होंने कहा था, ''आज लोकतंत्र भय को पराजित करेगा। सबसे कठिन परिस्थितियों में भी लोकतंत्र को कोई ब्लैकमेल नहीं कर सकता। यह एक मूल्यवान विचार है और आगे बढ़ने का रास्ता है।'' ग्रीस से मिला पहला सबक है कि 'नहीं' राजनीतिक है। यह लोकतंत्र है। यह गरिमा है। ❑

युवा-शक्ति

राष्ट्र-निर्माण और युवा

❑ अशोक भारत

आजादी के बाद तो यह विषमता घटनी चाहिए, लेकिन हुआ ठीक इसका उल्टा। मेरे जैसे लोगों के मन में यह सवाल उठता है कि इस आजादी का क्या करें, जिसमें गुलामी के दौर से ज्यादा विषमता बढ़ी है?

आजादी प्राप्त हुए सात दशक हो रहे हैं। इन बीते वर्षों में विकास के नाम पर बड़े-बड़े नगर-महानगर खड़े किये गये। 'एक्सप्रेस' वे बना, सड़कें चौड़ी हुईं। विशाल कल-कारखाने, बांध बनाये गये। विज्ञान एवं तकनीक के क्षेत्र में नये कीर्तिमान स्थापित हुए। राष्ट्र अणुशक्ति सम्पन्न बना। चन्द्रयान की सफलता के बाद मंगलयान का प्रक्षेपन सफलतापूर्वक हुआ। इन सब उपलब्धियों के बीच एक सवाल जो आजादी की लड़ाई के दौरान भी था, आज भी बना हुआ है, जिसे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भी 'नमक सत्याग्रह' के दौरान उठाया था। वह है 'आर्थिक असमानता का सवाल', आज यह बहुत बड़ा सवाल बन गया है।

1930 में 'नमक सत्याग्रह' के दौरान महात्मा गांधी ने तात्कालीन वायसराय को पत्र लिखकर पूछा था कि ''आपकी आमदनी और सबसे गरीब आदमी की आमदनी के बीच 5000 गुना का फर्क है, फिर भी आपको नमक पर टैक्स लगाते हुए शर्म नहीं आयी।'' आजादी के 67 वर्ष बाद स्थिति और खराब हुई है। असंगठित क्षेत्र के मजदूरों की स्थिति का अध्ययन के लिए भारत सरकार द्वारा गठित अर्जुन सेन गुप्ता की रिपोर्ट यह बतलाता है कि देश के 78 प्रतिशत लोगों की दैनिक आमदनी 20/- या इससे कम है। दूसरी तरफ देश में अरबपतियों की संख्या बढ़ रही है।

आजादी के बाद तो यह विषमता घटनी चाहिए, लेकिन हुआ ठीक इसका उल्टा। मेरे जैसे लोगों के मन में यह सवाल उठता है कि इस आजादी का क्या करें, जिसमें गुलामी के दौर से ज्यादा विषमता बढ़ी है?

आर्थिक विषमता बढ़ने का सीधा मतलब है गरीबी, बेरोजगारी का इजाफा होना। इस समय देश का हर चौथा आदमी भूखा है और हर दूसरा बच्चा कुपोषण का शिकार। पिछले 20 वर्षों में लगभग 3 लाख किसानों ने आत्महत्या की है। किसानों की स्थिति तो हमेशा ही दयनीय रही है मगर इससे पूर्व कभी भी किसानों ने हताश होकर आत्महत्या का विकल्प नहीं चुना था, अब आजाद भारत में वह हो रहा है, वह भी तब, जब देश को यह अहसास कराने की कोशिश हो रही है कि भारत एक महाशक्ति बन रहा है। बाजारवादी अर्थव्यवस्था में जीवन के मूल आधार, जल-जंगल-जमीन-खनिज-पहाड़ आदि कुदरत के अनमोल उपहारों पर बड़ी-बड़ी देशी-विदेशी कंपनियों का कब्जा हो रहा है। आज आदमी के जीवन जीने के आधार छीने जाने से गरीबी और विषमता में वृद्धि हो रही है। भारतीय संविधान का घोषित लक्ष्य सभी नागरिकों के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय दिलाना है। मगर आजादी के बाद विकास की जो नीति अपनायी गयी, उससे

आर्थिक असमानता लगातार बढ़ रही है। इन नीतियों से न केवल अमीरी-गरीबी के बीच का फासला बढ़ा है बल्कि क्षेत्रीय असंतुलन भी पैदा हुआ है। राज्यों के बीच भी फासला बढ़ा है। एक तरफ बिहार, झारखंड, ओडिशा, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश आदि राज्य हैं, दूसरी तरफ महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, हरियाणा, पंजाब आदि राज्य हैं। हरियाणा-पंजाब में प्रति व्यक्ति आय और बिहार-झारखंड में प्रति व्यक्ति आय में कई गुना का फासला है। ऐसा ही कृषि एवं सेवा क्षेत्र में भी हुआ है।

स्पष्ट है कि विकास की नीति की दिशा गलत है जो देश को लगातार संविधान के घोषित लक्ष्य से दूर ले जा रही है। आजादी के बाद हमने विकास के वही पश्चिमी मॉडल को अपनाया, जिसके बारे में अब स्वयं पश्चिम में सवाल खड़े हो रहे हैं। महात्मा गांधी ने कहा था ''मेरे सपनों का स्वराज तो गरीबों का स्वराज होगा। जीवन की जिन आवश्यकताओं का उपयोग राजा और अमीर लोग करते हैं, वही तुम्हें भी मिलना चाहिए, इसमें फर्क के लिए स्थान नहीं हो सकता।'' *(यंग इंडिया, 26.3.31)*

उन्होंने आगे कहा कि ''मेरी कल्पना के स्वराज्य के बारे में किसी को कोई गलतफहमी भी नहीं होनी चाहिए। इसका अर्थ है विदेशी नियंत्रण से मुक्ति और पूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता।'' लेकिन देश आज बापू की कल्पना के स्वराज्य से काफी दूर जा चुका है। 26 नवंबर 1949 को संविधान सभा में बोलते हुए डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने अगाह किया था कि आर्थिक आजादी और सामाजिक न्याय के बिना राजनैतिक आजादी भी कायम नहीं रह पायेगी। डॉ. अम्बेडकर की चेतावनी आज सही प्रतीत हो रही है। नयी वैश्विक व्यवस्था में देश की राजनीतिक आजादी भी खतरे में पड़ गयी है।

भारतीय लोकतंत्र आज संक्रमण काल से गुजर रहा है, संकट में है। भारतीय संसद और विधान सभाओं में बाहुबलियों, आपराधिक पृष्ठभूमि के लोगों एवं धनपतियों का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। 2004 के लोकसभा चुनाव में निर्वाचित सांसदों में 154 करोड़पति थे, जबकि 2009 में यह संख्या बढ़कर 300 से ऊपर हो गयी। 16वीं लोकसभा में 82 प्रतिशत यानी 442 सांसद करोड़पति हैं। राजनीति में तेजी से पूंजीपतियों का एकाधिकार होता जा रहा है और वह आम लोगों की पहुंच या दखल से दूर होती जा रही है। उसी प्रकार संसद में दागी सांसदों की संख्या में वृद्धि हुई है, चौदहवीं (2004) लोकसभा में दागी सांसदों की संख्या 128 थी, जो पन्द्रहवीं (2009) लोकसभा में बढ़कर 150 हो गयी, जिनमें 73 सांसद ऐसे हैं जिनके खिलाफ गंभीर आपराधिक मामले दर्ज हैं। लोकसभा के लगभग 30% और राज्यसभा के 17% सांसदों के खिलाफ आपराधिक मामले दर्ज हैं। 16वीं लोकसभा चुनाव में 186 यानी 34 सांसद आपराधिक पृष्ठभूमि के हैं, जिनमें 121 यानी 21% प्रतिशत सांसदों पर हत्या, बलात्कार, अपहरण, दंगा भड़काने आदि जैसे गंभीर आपराधिक मामले दर्ज हैं, जो लोकतंत्र के लिए खतरे की घंटी है। अभी हाल ही में न्यायालय से दोषी करार नेताओं को चुनाव लड़ने से वंचित करने का आदेश सर्वोच्च न्यायालय ने पारित किया था। उस आदेश को रद्द करने के लिए सभी दल एकजुट हो गये। आज सत्ता पर काबिज और विपक्षी पार्टियों की आर्थिक नीति में कोई फर्क नहीं है। अर्थनीति राजनीति का सकेन्द्रित रूप है। जब राजनीति से आम आदमी के जिन्दगी के सवाल गायब हो जाते हैं तो राजनीति अस्मिता के सहारे चलती है, भावनात्मक मुद्दों को उभार कर की जाती है। राजनीति जातिवाद, धर्म, साम्प्रदायिकता, प्रांतवाद, भाषावाद, क्षेत्रवाद के सहारे चलती है। नेताओं ने यह कला सीख ली है कि कैसे आम आदमी के वास्तविक हितों को नजरअंदाज कर मात्र कुछ शिगूफे छोड़कर, भावनाओं को भड़काकर चुनाव जीता जा सकता है। महात्मा गांधी ने आज से लगभग 104 वर्ष पूर्व 'हिन्द स्वराज्य' में ब्रिटिश पार्लियामेंट, जिसके तर्ज पर भारतीय संसद का गठन किया गया है, पर कठोर टिप्पणी की थी। उन्होंने कहा था कि ''पार्लियामेंट के मेम्बर दिखावटी एवं स्वार्थी पाये जाते हैं। सब अपना मतलब साधने को सोचते हैं। बड़े सवालों पर जब पार्लियामेंट चलती है तो इसके मेम्बर पैर फैलाकर लेटते हैं या बैठे-बैठे झपकियां लेते हैं। उस पार्लियामेंट के मेम्बर इतने जोर से चिल्लाते हैं कि सुनने वाले हैरान-परेशान हो जाते हैं।'' यह सब बातें आज हमारी संसदीय व्यवस्था पर शत-प्रतिशत लागू होती है। आज पार्टियों में आंतरिक लोकतंत्र का सर्वथा अभाव है। जब पार्टियां ही लोकतांत्रिक आधार पर नहीं चलायी जा रही हैं तो फिर उनसे संसदीय लोकतंत्र को मजबूत करने की उम्मीद कैसे की जा सकती है।

उदारीकरण के दौर में लोकतांत्रिक संस्थाओं और लोगों के लोकतांत्रिक अधिकार भी प्रभावित हुए हैं। अपनी जिन्दगी और जीविका के लिए लोकतांत्रिक तरीके से संघर्ष कर रहे लोगों पर राज्य हर प्रकार के अड़ंगे लगा रही है, उनके खिलाफ बल का प्रयोग कर रही है जबकि पूंजीपतियों को संरक्षण प्रदान कर रही है। महात्मा गांधी ने मृत्यु के एक दिन पूर्व अपने लेख में लिखा था— ''लोकशाही के मकसद की तरफ हिन्दुस्तान की प्रगति के दरमियान सैन्य शक्ति पर लोकसत्ता को प्रधानता देने की लड़ाई अनिवार्य है।'' अब वक्त आ गया है हम लोकशाही को मजबूत करने की दृष्टि से इस दिशा में ठोस पहल की जाय।

भारत की संस्कृति; समन्वय की संस्कृति रही है। भारत में अनेक मानव समुदाय में विशेष तरह के पारस्परिक संबंध तथा आदर्शों का चुनाव भारतीय जीवन को संचालित करते रहे हैं। भारत में यह संबंध यूरोप तथा दुनिया के अन्य कई भागों से भिन्न रहे हैं। यूरोप में जब एक कबायली समूह एक जगह से दूसरे जगह गया तो उसने वहां के प्राचीन बाशिंदों

को या तो वहां से भगा दिया या खत्म कर दिया। इसके विपरीत भारत में हजारों वर्ष से विभिन्न कबायली समूह आते रहे और पुराने कबीलों के साथ अकसर एक खास तरह की जातीय व्यवस्था करके बस गये। इस क्रम में कोल, द्रविड़, आर्य, शक, हूण, पठान, तुर्क, अरब, सिथियन आदि अनेक प्रजातियों के कबीले भारत में आये और भारत की जीवनधारा में मिलकर विलीन हो गये। इससे एक-दूसरे के रीति-रिवाजों, पूजा-पाठ, देवी-देवताओं आदि को बरदाश्त करने तथा समझने की परंपरा बनी, जिससे विश्वासों की पारस्परिक सहिष्णुता कायम हुई। जो आगे चलकर परंपरा बनी, जिससे धार्मिक मतभेदों को खत्म करने के लिए तलवार के बजाय संवादों और शास्त्रार्थों का सहारा लिया गया। भारतीयता का यह सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंग है। इसे सहन करने और जब्त करने की शक्ति से भारत, भारत बना रहा।

भारत की अस्मिता को बनाये रखने में दूसरी महत्त्वपूर्ण चीज थी, जीवन के आदर्शों का चुनाव। भारतीय आदर्शों में बाहरी वस्तुओं के बजाय आंतरिक उपलब्धियों पर अधिक जोर दिया गया। इससे भारत के दर्शन और धर्म में संतोष, आत्म नियंत्रण, निःस्वार्थ सेवा, अपरिग्रह आदि केन्द्रीय मूल्य बन गये। परोपकार को तो सभी धर्मों का सार ही मान लिया गया। इस तरह के विचार उपनिषदों, पुराणों तथा बौद्ध, जैन सभी धर्मों में प्रधान हैं। कालांतर में इस्लाम के आने के बाद भारतीय धर्म और इस्लाम के पारस्परिक प्रभाव से आपसी विभेदों को मिटाती हुई संत-कवियों की परंपरा चली तो उसमें इन्हीं तत्त्वों की प्रधानता मिली। उदाहरण के लिए सूफी संत फरीद (13वीं सदी) की इन पंक्तियों में इसी भावना की अभिव्यक्ति होती है :

''रुक्खी-सुक्खी खाय के ठंडा पानी पीव।
फरीद देखि परायी चोपड़ी न तरसावे जीव॥''

इसी तरह दूसरे सूफी संत दातागंज बक्स (11वीं सदी) कहते हैं—ऐ मुरीदों, त्याग और परोपकार ही फकीरी की कुंजी है। दूसरों को सुख पहुंचाने के लिए कष्ट उठाना और दूसरों के लाभ के लिए अपने नुकसान की ओर ध्यान न जाना, स्वार्थ को त्यागना ही धर्म है।

जाहिर है सदियों से भारत साझा संस्कृति का देश रहा है। सबको साथ लेकर चलने की परंपरा, बहुलतावादी स्वरूप, देश की ताकत रही है। अनेकता में एकता देश की विशिष्टता है। लेकिन सांप्रदायिक शक्तियों व कुछ संकीर्ण सोच वाले लोग देश को गुमराह करने में लगे हैं। आजादी की लड़ाई में भी इन सांप्रदायिक शक्तियों के कारण देश को भारी नुकसान उठाना पड़ा, अंततः देश का बंटवारा हो गया। एक बार फिर सांप्रदायिक, फासीवादी शक्तियां देश में सर उठा रही हैं, सामाजिक तानाबाना एवं सौहार्द बिगाड़ने में लगी हैं तथा देश की एकता और अखंडता के लिए गंभीर चुनौती पेश कर रही हैं। जरूरत इस बात की है कि देश की साझी विरासत को कायम रखते हुए इन सांप्रदायिक हिंसा व नफरत तथा लोगों को बांटने की कोशिश को नाकाम किया जाये।

आज एक तरफ हिंसा एवं आतंकवाद सर उठा रहा है तो दूसरी तरफ भ्रष्टाचार, नैतिक मूल्यों में हो रही गिरावट हमारी चिन्ता का कारण बनी हुई है। महात्मा गांधी ने 'हिन्द स्वराज्य' में कहा है कि—''गरीब हिन्दुस्तान तो अंग्रेजों की गुलामी से छूट जायेगा लेकिन अनीति से पैसा वाला बना हिन्दुस्तान गुलामी से नहीं छूट सकेगा।'' आज हिन्दुस्तान पैसा वाला अवश्य बन रहा है मगर चारों तरफ अनीति-अधर्म का बोलबाला है। दिन-रात उद्घाटित होने वाले भ्रष्टाचार के अंतहीन घटनाओं से ऐसा लगता है कि यह देश घोटालों का देश बन गया है। हमारे सामाजिक जीवन का शायद ही कोई क्षेत्र हो; जो भ्रष्टाचार से अछूता हो। यह एक नये प्रकार की बीमारी है जो भारत की अन्तर्रात्मा को खोखला कर रही है। युग द्रष्टा महात्मा गांधी ने बहुत पहले इसके प्रति सचेत किया था जो आज सत्य साबित हो रहा है।

सवाल यह है कि इस प्रकार की सभी समस्याओं का हल क्या है? महात्मा गांधी ने जिस राष्ट्र-निर्माण का कार्य स्वतंत्रता संग्राम के दौरान शुरू किया था, वह कार्य अभी पूरा होना बाकी है। इतिहास का यह अनुभव रहा है कि दुनिया बदलने की अगुवाई हमेशा नयी पीढ़ी ने की है। आदमी बीमार होता है तो डॉक्टर के पास जाता है, जब पूरे देश में यह बीमारी फैली हो तो उसका इलाज तो युवाओं के पास ही है। महात्मा गांधी ने 10.09.31 को यंग इंडिया में लिखा है ''मैं ऐसे भारत के लिए कोशिश करूंगा, जिसमें गरीब से गरीब लोग भी यह महसूस करेंगे कि यह उनका देश है—जिसके निर्माण में उसकी आवाज का महत्त्व है। मैं ऐसे भारत के लिए कोशिश करूंगा, जिसमें ऊंचे और नीचे जैसे वर्गों का भेद नहीं होगा और विविध सम्प्रदाय में पूरा मेलजोल होगा। ऐसे भारत में अस्पृश्यता के या शराब और दूसरी नशीली चीजों के अभिशाप के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता। उसमें स्त्रियों को वही अधिकार होंगे जो पुरुषों के होंगे। शेष दुनिया के साथ हमारा संबंध शांति का होगा, न तो हम किसी का शोषण करेंगे न किसी द्वारा शोषण होने देंगे।''

आज आसमान छूती आर्थिक विषमता, लोकतंत्र, लोकतांत्रिक संस्था एवं अधिकारों की रक्षा साम्प्रदायिकता, फासीवाद, हिंसा एवं आतंकवाद तथा भ्रष्टाचार आदि समस्याओं से निजात पाने के लिए सशक्त राष्ट्रीय अभियान की आवश्यकता है। इस कार्य के लिए मानवता प्रेमी देशभक्त लोगों को एक साथ आने एवं पहल करने की आवश्यकता है, जिसमें युवाओं की भूमिका निर्णायक होगी। तभी हम सब अपने सपनों व गांधीजी की कल्पना का भारत का निर्माण कर पायेंगे, जिसमें समाज के सबसे अंतिम पायदान पर अवस्थित लोग भी यह महसूस करें कि यह उनका देश है, जिसके निर्माण में उनकी भूमिका महत्त्वपूर्ण है। ❑

एक अपील

सर्वोदय समाज सम्मेलन : 2015

सहयोग के लिए निवेदन

गांधीजी ने अपने जीवनकाल में अलग-अलग रचनात्मक कार्य के लिए अलग-अलग संस्थाओं का गठन किया था। उनके देहावसान के बाद इन सभी संघों का सेवाग्राम में एक सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में संघों के पदाधिकारियों के अतिरिक्त देश के मूर्धन्य गांधीवादी नेता भी शामिल हुए। विस्तृत चर्चा के उपरांत अनेक सुझाव आये। अंत में तय किया गया कि सत्य-अहिंसा और सत्याग्रह पर आधारित एक खुला मंच 'सर्वोदय समाज' स्थापित हो। और, सभी रचनात्मक संघों को मिलाकर 'सर्व सेवा संघ' बनाया जाय। यही सर्व सेवा संघ आजकल अखिल भारतीय सर्वोदय मंडल के नाम से भी जाना जाता है।

'सर्वोदय समाज' एवं 'सर्व सेवा संघ' (अ. भा. सर्वोदय मंडल) लगभग हर वर्ष देश के किसी भी स्थान राष्ट्रीय स्तर पर सर्वोदय सम्मेलन करता है। गांधीजनों ने इसके लिए 'सर्वोदय समाज' का गठन किया है, जिसका उद्देश्य सर्वोदय सममेलन आयोजित करना है। इस बार यह सम्मेलन दिल्ली में हो रहा है। सम्मेलन स्थल, गांधीजी द्वारा स्थापित 'हरिजन सेवक संघ', किंग्सवे कैम्प, दिल्ली-9 है।

इस सम्मेलन में देश और विदेश से लगभग पांच हजार प्रतिनिधियों के भाग लेने की संभावना है। सम्मेलन 1 से 3 नवंबर, 2015 को हो रहा है। तीन दिवसीय सम्मेलन से पहले दो दिन का सर्व सेवा संघ का अधिवेशन होगा। इसके अतिरिक्त सर्व सेवा संघ की कार्यसमिति, विभिन्न प्रकोष्ठों की बैठकें भी इस स्थान पर आहूत की गयी है।

लगभग सात दिन तक हरिजन सेवक संघ, किंग्सवे कैम्प, दिल्ली में यह समारोह होगा। बाहर से आने वाले प्रतिनिधियों के रहने, खाने और पांडाल आदि की व्यवस्था इसी स्थान पर करनी होगी। प्रतिनिधि देश-विदेश से आयेंगे। इसलिए सीधी सादी व्यवस्था भी क्यों न हो, खर्च तो होगा ही। यह सर्वविदित है कि सर्व सेवा संघ किसी सरकारी अनुदान पर नहीं चलता। सारी व्यवस्था जन-सहयोग से ही करनी पड़ती है। यह एक बड़ी जिम्मेदारी है, जिसके लिए आपका सहयोग प्रार्थनीय है।

सहयोगकर्ता, धन से, अनाज से, पांडाल व्यवस्था, प्रतिनिधियों के लिए किट, स्वच्छता, जल, बिजली आदि किसी भी मद में, किसी भी तरीके से सम्मेलन के लिए सहायता दे सकते हैं।

सम्मेलन के लिए सहायता देने वालों को 'सर्वोदय समाज' से रसीद प्राप्त करनी होगी। **सर्व सेवा संघ का बैंक खाता संख्या-9700101100019 53, IFSC Code : BKID 0009700 बैंक ऑफ इंडिया, वर्धा (महाराष्ट्र)** है। आप पेमेण्ट ऑर्डर, ड्राफ्ट, चेक या ऑनलाईन ट्रांसफर जैसे भी सुविधा हो उक्त खाते में अपना सहयोग राशि भेज सकते हैं। अपने भेजे गये सहयोग की सूचना *''सर्वोदय समाज, महादेवभाई भवन, सेवाग्राम-442102,वर्धा (महाराष्ट्र)''* पते पर हमें भेजें ताकि आपको *'80जी'* (आयकर छूट) का लाभ मिल सके। आपसे आर्थिक सहायता के लिए विनम्र अपील करते हैं। क्योंकि आपकी आर्थिक सहायता से ही सम्मेलन सफल होगा।

: निवेदक :

(आदित्य पटनायक)	(महादेव विद्रोही)	(राधा भट्ट)	(जयवंत मठकर)	(लक्ष्मीदास)	(डॉ. एस.एन. सुब्बाराव)
संयोजक	अध्यक्ष	अध्यक्ष	अध्यक्ष	अध्यक्ष	राष्ट्रीय युवा योजना
सर्वोदय समाज	सर्व सेवा संघ	गांधी शांति प्रतिष्ठान	सेवाग्राम आश्रम	अ.भा.ग्रामोद्योग महासंघ	नई दिल्ली

पश्चिम बंग गांधी शांति प्रतिष्ठान द्वारा आयोजित सेमिनार

विषय : ''दक्षिण अफ्रीका से गांधीजी के प्रत्यावर्तन के बाद भारतीय समाज में नवयुग का प्रारम्भ''

स्थान : कस्तूरबा भवन, सर्वोदय पार्क, हावड़ा : 22 अगस्त, 2015

असम की बी.टी.ए.डी. इलाके में गांधीजनों द्वारा सन् 2012 से चल रहे

'असम शांति यात्रा'

के अगले चरण के रूप में सर्व सेवा संघ एवं गांधी शांति प्रतिष्ठान द्वारा तीन दिवसीय

'शांति सदभावना समारोह'

स्थान : कोराझार, बी.टी.ए.डी., असम

शांति सदभावना दिवस	प्रेरणा-राष्ट्रीय एकता दिवस	संकल्प और निर्माण दिवस
30 अगस्त, 2015	31 अगस्त, 2015	1 सितंबर, 2015

उपरोक्त कार्यक्रमों के संबंध में किसी भी जानकारी के लिए सम्पर्क करें : **श्री चंदन पाल, मंत्री, सर्व सेवा संघ, मो. 9433022020**

सर्व सेवा संघ कार्यकारिणी की बैठक में पारित प्रस्ताव

जुलाई 12-13, 2015 को गोंडल (गुजरात) में सम्पन्न हुई सर्व सेवा संघ कार्यकारिणी की बैठक ने देश की वर्तमान सामाजिक, राजनैतिक परिस्थितियों का विश्लेषण करते हुए यह मानती है कि यह देश, समाज और लोकतंत्र के हित में नहीं है। इस परिप्रेक्ष्य में गत दिनों देश में हुई कुछ घटनाओं पर दृष्टिपात किया जाना आवश्यक है—

1. व्यावसायिक परीक्षा मंडल (व्यापमं) घोटाला, जो यद्यपि 1990 में हुई कुछ अनियमितताओं से शुरू हुआ और जिसकी प्रथम सूचना रिपोर्ट 2000 में दर्ज हुई। 2011 में पीएमटी परीक्षाओं में हुई कुछ बड़ी गड़बड़ियों की शिकायतों के बाद राज्य सरकार ने मामले की जांच के लिए एक कमेटी बनायी, जिसकी 2011 में मिली रिपोर्ट के आधार पर 100 से अधिक लोगों की गिरफ्तारी हुई। मामला पूरी तरह 2013 में सामने आया, जब इन्दौर पुलिस ने पीएमटी 2009 की परीक्षाओं में गड़ी के 20 आरोपी गिरफ्तार किये और इनके सरगनाओं से पूछताछ में पूरे रैकेट का पता चला। 20133 में सरकार ने एक विशेष कार्य बल का गठन किया। उसके बाद की पुलिस पूछताछ में कई राजनेताओं, सरकारी अधिकारियों, दलालों, परीक्षार्थियों तथा उनके परिजनों के बड़े स्तर पर शामिल होने का भंडाफोड़ हुआ। जून 2015 तक 200 से अधिक लोग गिरफ्तार किये गये, जिसमें मध्य प्रदेश भाजपा सरकार के पूर्व शिक्षामंत्री लक्ष्मीकांत शर्मा भी शामिल हैं, जिनपर परीक्षार्थियों से 85 लाख रुपये रिश्वत लेने के आरोप हैं। घोटाले की गंभीरता को देखते हुए जुलाई, 2015 में सर्वोच्च न्यायालय ने मामले को सीबीआई को देने का आदेश दिया।

घोटाले से संबंधित 35 लोगों की अब तक संदेहास्पद स्थितियों में मृत्यु हो चुकी है। यह अब तक के विकटतम घोटालों में से एक है।

2. जून 2015 में मुम्बई में हुई शराब दुखांतिका में जहरीली शराब पीकर 116 लोगों की मृत्यु हो गयी। शराब के अवैध व्यापार के कारण इतनी बड़ी संख्या में गरीब लोगों की मौत व्यवस्था पर भारी चोट है।

3. राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की हत्या करने वालों का गुणगान और उनके नाम से मंदिर बनाकर हत्यारों की मूर्ति स्थापित करने वालों को सत्तारूढ़ दल के नेताओं का खुला समर्थन देश और मानवता के लिए शर्मनाक है।

4. आर्थिक मोर्चे पर कारपोरेट घरानों को सरकार के प्रत्यक्ष और प्रच्छन्न सहयोग की अनेक घटनाएं हैं, जिनमें अडाणी समूह को ऑस्ट्रेलिया में कोयला खदान के लिए दिया गया भारी भरकम ऋण आश्चर्यजनक है। पहले से करोड़ों रुपये का ऋण बकाया रहते हुए स्टेट बैंक ऑफ इंडिया द्वारा इस हेतु दिया गया 6 हजार करोड़ रुपये का ऋण अब तक किसी भी विदेशी परियोजना के लिए दिया गया सबसे बड़ा कर्ज है।

5. किसानों को असहाय बनाने वाला भूमि अधिग्रहण बिल सरकार की किसानों के प्रति हृदयहीनता का वीभत्स उदाहरण है। देशभर के किसानों सहित विभिन्न समुदायों, वर्गों द्वारा लगातार किये जा रहे विरोध के बावजूद सरकार इसे पारित कराये जाने पर आमादा है।

सर्व सेवा संघ कार्यकारिणी इन जन विरोधी घटनाओं तथा नीतियों की निन्दा करती है तथा देश में तत्काल प्रभाव से पूर्ण शराबबंदी की मांग करती है, ताकि मुम्बई जैसी दुखांतिका की पुनरावृत्ति न हो।

वरिष्ठ सर्वोदय कार्यकर्ता श्री रामचन्द्र भार्गव नहीं रहे

वरिष्ठ सर्वोदय कार्यकर्ता, मध्य प्रदेश सर्वोदय मंडल के भूतपूर्व अध्यक्ष एवं गांधी भवन, भोपाल के संस्थापक श्री रामचन्द्र भार्गव का 28 जुलाई, 2015 की सबुह भोपाल में निधन हो गया।

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) के अध्यक्ष **श्री महादेव विद्रोही** ने श्री भार्गव के निधन पर गहरा दुःख व्यक्त करते हुए कहा है कि श्री भार्गवजी के देहावसान से मध्य प्रदेश में सर्वोदय आंदोलन की अपूरणीय क्षति हुई है। श्री भार्गवजी ने अपना पूरा जीवन सर्वोदय-विचार के लिए समर्पित कर दिया था। वे मध्य प्रदेश में सर्वोदय आंदोलन के आधार स्तम्भ थे। उन्होंने प्रदेश के विभिन्न जिलों में सर्वोदय आंदोलन को आगे बढ़ाया तथा अनेक नये लोगों को जोड़ा।

श्री विद्रोही ने सर्वोदय आंदोलन एवं सम्पूर्ण क्रांति आंदोलन में उनके योगदान का स्मरण करते हुए कहा है कि न सिर्फ सर्वोदय आंदोलन ने बल्कि गांधी-विचार में आस्था रखने वाले सभी परिवर्तनकारी समूहों ने अपना एक सच्चा साथी एवं हमदर्द खो दिया है।

सर्व सेवा संघ श्री भार्गवजी की धर्मपत्नी श्रीमती रुक्मिणी बहन को दुःख की इस घड़ी में अपनी विनम्र संवेदनाएं प्रेषित करता है एवं देशभर में फैले प्रदेश सर्वोदय मंडलों, जिला सर्वोदय मंडलों, लोकसेवकों, एवं सर्वोदय सर्वोदय मित्रों की ओर से श्री भार्गवजी को भावभीनी श्रद्धांजिल अर्पित करता है।

–भवानीशंकर कुसुम, रा. प्र.,स.से.सं.

'सर्वोदय जगत'
के सभी सुहृद पाठकों, ग्राहकों, लेखकों व शुभचिन्तकों को
'स्वतंत्रता दिवस'
के शुभ अवसर पर
सर्व सेवा संघ,
सर्व सेवा संघ प्रकाशन
एवं
'सर्वोदय जगत' परिवार
की ओर से
ढेर सारी बधाइयाँ
व
हार्दिक शुभकामनाएँ!

गतिविधियां एवं समाचार

उच्च शिक्षा को डब्ल्यू. टी. ओ. के सुपुर्द करने के खिलाफ कार्ययोजना :

14 से 16 जून, 2015 को हुई 'अखिल भारत शिक्षा अधिकार मंच' (अभाशिअम) की चौथी राष्ट्रीय परिषद बैठक में शिक्षा पर हो रहे हर तरह के नव-उदारवादी हमलों और बाजारीकरण व साम्प्रदायीकरण के नापाक गठजोड़ से आम लोगों के जीवन पर पड़ रहे विनाशकारी प्रभावों पर गंभीरता से विचार किया गया। परिषद में इस तथ्य पर गहरी चिन्ता व्यक्त की गयी कि इस बात की पूरी सम्भावना है कि 15-18 दिसंबर, 2015 को नैरोबी, केन्या में होने वाली विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू. टी.ओ.) की दसवीं मंत्री स्तरीय बैठक में भारत सरकार उच्च शिक्षा को डब्ल्यू.टी.ओ. के मातहत वैश्विक बाजार के 'सुपुर्द' कर देगी। ज्ञातव्य हो कि भारत सरकार ने सन् 2005 में ही इस संबंध में डब्ल्यू.टी.ओ. के पटल पर उच्च शिक्षा का 'प्रस्ताव' रख दिया है, जो इस 'सुपुर्दगी' का पहला चरण है। जैसे ही उच्च शिक्षा के 'सुपुर्दगी' की यह प्रक्रिया पूरी हो जायेगी वैसे ही WTO-GATS (जनरल एग्रीमेंट ऑन ट्रेड इन सर्विसेज यानी सेवा क्षेत्र में व्यापार के लिए आम समझौता) के तहत लागू होने वाले व्यापार के नियम हमेशा के लिए भारत की उच्च शिक्षा को अपने शिकंजे में कस लेंगे। यह जानना भी जरूरी है कि भारत (या डब्ल्यू.टी.ओ. के किसी सदस्य देश) के पास यह विकल्प है कि वह शिक्षा समेत किसी भी सेवा क्षेत्र को चाहे तो डब्ल्यू.टी.ओ. के सुपुर्द करने से मना कर सकता है। लेकिन अगर सरकार ने ऐसा नहीं किया और शिक्षा को डब्ल्यू.टी.ओ. के हवाले कर दिया तो उस दशा में इसे वापस लेना लगभग नामुमकिन हो जायेगा। इसका सीधा मतलब है कि भारत के पास अभी भी यह विकल्प है कि वह शिक्षा को डब्ल्यू.टी.ओ. के दायरे से बाहर रखे लेकिन यह तभी सम्भव है जब नैरोबी बैठक से पहले उच्च शिक्षा में डब्ल्यू.टी.ओ. को दिये 'प्रस्ताव' को सरकार वापस ले लेती है। अगर हमने अभी भारत सरकार को ऐसा करने के लिए राजी या मजबूर नहीं किया तो उच्च शिक्षा हमेशा के लिए साम्राज्यवादी वैश्विक व्यापार नियमों के मातहत गिरवी हो जायेगी। परिस्थिति की की इस गंभीरता को समझते हुए अभाशिअम की राष्ट्रीय परिषद ने देशव्यापी सघन प्रतिरोध अभियान छेड़ने का फैसला लिया है ताकि भारत सरकार उच्च शिक्षा को वैश्विक बाजार के 'सुपुर्द' करने से बाज आये और डब्ल्यू.टी.ओ. में दिये उच्च शिक्षा के 'प्रस्ताव' को तत्काल वापस ले।

अभाशिअम की राष्ट्रीय परिषद ने यह भी निर्णय लिया कि मंच का हर सदस्य- संगठन स्कूल व उच्च शिक्षा में लोगों के अधिकारों की सुरक्षा व विस्तार के लिए जारी अपने मौजूदा संघर्षों के साथ-साथ उच्च शिक्षा को डब्ल्यू.टी.ओ. के सुपुर्द किये जाने की इस साजिश के खिलाफ व्यापक अभियान खड़ा करेगा ताकि नव उदारवाद के इस हमले का प्रभावी प्रतिरोध किया जा सके। अगर कोई संगठन उच्च शिक्षा के किसी मुद्दे पर सक्रिय है तो उस मुद्दे को भी WTO-GATS के खिलाफ इस प्रस्तावित अभियान से जोड़ने का सचेत प्रयास किया जाना चाहिए। चूंकि हमारी क्षमताएं सीमित हैं, इसलिए इस डब्ल्यू.टी. ओ. विरोधी अभियान में हमारी प्राथमिकता विश्वविद्यालयों व कॉलेजों के टीचरों को संगठित करना होनी चाहिए। नव-उदारवाद के खिलाफ आवाज उठाने वाले व्यक्तियों/संगठनों के दायरे के बाहर भी हमें ऐसे जन पक्षधर संगठनों व व्यक्तियों की पहचान करनी होगी, जो इस अभियान में हमारे साथ खड़े हो सकें। हमारा अभियान इतना व्यापक होना चाहिए कि आम लोगों का मत हमारे पक्ष में हो जाये और इतना ताकतवर व दृढ़ होना चाहिए कि भारत सरकार उच्च शिक्षा को डब्ल्यू.टी.ओ. से वापस लेने पर मजबूर हो जाये। *(अभाशिअमं)*

अ. भा. ग्रामोद्योग सम्मेलन जलगांव में

खादी समिति सर्व सेवा संघ एवं खादी ग्रामोद्योग आंदोलन के संयुक्त तत्त्वावधान में अ. भा. ग्रामोद्योग सम्मेलन का आयोजन आगामी 11 व 12 सितंबर 2015 को गांधी तीर्थ, जैन हिल्स, जलगांव (महाराष्ट्र) में होगा। उक्त जानकारी देते हुए एक विज्ञप्ति में डॉ. चन्द्रशेखर धर्माधिकारी, खादी ग्रामोद्योग आंदोलन के अध्यक्ष डॉ. जी. पारेख, नई तालीम समिति के अध्यक्ष डॉ. सुगन बरंठ एवं खादी समिति, सर्व सेवा संघ के संयोजक जयवंत मठकर ने बताया कि खादी का ज्यादा से ज्यादा उपयोग व उत्पादन हो तथा केन्द्र एवं राज्य सरकारों के स्तर पर खादी संबंधी माँगों के निराकरण हेतु रणनीति तैयार करने हेतु इस सम्मेलन का आयोजन किया गया है। सम्मेलन के माध्यम से सभी को साथ लाने की प्रक्रिया भी शुरू की जायेगी। वैश्वीकरण के दुष्परिणाम हम सबके सामने है और हम इन्हें भुगत भी रहे हैं। इसके माध्यम से हो रहे अन्याय का प्रतिकार भी अब अनिवार्य हो गया है। इसका अहिंसक प्रतिकार एवं विकल्प पर भी इस सम्मेलन में चर्चा होगी। साथ ही साथ खादी एक परिपूर्ण विचार पर भी विस्तृत विमर्श होगा, इसके अलावा वर्तमान सरकारी नीतियों व इनकी कमियों पर भी विमर्श होगा। विज्ञप्ति में अनुरोध किया गया है कि प्रतिभागी अपनी पूर्ण स्वीकृति खादी समिति, द्वारा—आश्रम प्रतिष्ठा, पो. सेवाग्राम-02, वर्धा (महाराष्ट्र) के पते पर शीघ्र भेजें।

गोवंश बचाओ अभियान सम्मेलन

गोवंश बचाओ अभियान की ओर से जारी विज्ञप्ति में डॉ. सुगन बरंठ ने बताया कि देवनार सत्याग्रह का समापन गत अप्रैल 10 को सत्याग्रह संचालन समिति के नेतृत्व में घाटकोपर के सर्वोदय तीर्थ में उत्साहपूर्वक विधिवत सम्पन्न हुआ। इस दौरान देवनार सत्याग्रह का अगला कदम क्या हो इस पर चर्चा हुई।

समापन अवसर पर सर्वसम्मति से तय हुआ कि अब हमें सत्याग्रह दिल्ली ले जाना चाहिए। कुछ सदस्यों का विचार था कि, इसके स्वरूप पर अंतिम निर्णय करने के लिए हमें देशभर के प्रमुख गांधीजन एवं गांधी संस्थाओं की एक संगोष्ठी बुलायी जाये। इसकी जिम्मेदारी श्री जयवंत मठकर (अध्यक्ष, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान) एवं डॉ. सुगन बरंठ (अध्यक्ष, नई तालीम समिति, सेवाग्राम) ने स्वीकार की।

पवनार आश्रम में 17 अगस्त से 19 अगस्त तक होने वाले सम्मेलन हेतु अपेक्षा की गयी कि निम्न संस्थाओं—देवनार सत्याग्रह संचालन समित, सर्व सेवा संघ, सेवाग्राम आश्रम प्रतिष्ठान, गांधी शांति प्रतिष्ठान, नई तालीम समिति, अ. भा. कृषि गोसेवा संघ, राष्ट्रीय हरिजन सेवक संघ, महाराष्ट्र कृषि गो-सेवा संघ, गो-विज्ञान समिति, सद्भावना संघ, मुम्बई सर्वोदय मंडल, केन्द्रीय गांधी स्मारक निधि, महाराष्ट्र पांजरापोल महासंघ, गोविज्ञान भारती इसमें अवश्य भागीदारी करें।

इस संबंध में राधाबहन भट्ट, जयवंत मठकर, डॉ. सुगन बरंठ, डॉ. रामजी सिंह, महावीर त्यागी, अमरनाथ भाई, कृष्णम्मल जगन्नाथन, अण्णा जाधव, लक्ष्मीदास, फैजल खान, रजनीश कुमार, प्रो. सोमनाथ रोडे, प्रो. डॉ. पुष्पेन्द्र दुबे, आबा कांबले ने अपील की है। व्यवस्था की दृष्टि से आपके आने की सूचना जयवंत मठकर, आश्रम प्रतिष्ठान, सेवाग्राम-02, वर्धा (महाराष्ट्र) को देने की कृपा करें। **–स.ज. प्रतिनिधि**

'अगस्त क्रांति' के आलोक में समकालीन कविताएं

❑ केशव शरण

यह चित्र ज़रूर उभरता है

यूनियन जैक उतर चुका है
विभाजन की वेला है
गोडसे की गोली
गांधीजी के सीने की ओर चल पड़ी है
यह चित्र ज़रूर उभरता है
आज भी जब
पन्द्रह अगस्त
दो अक्टूबर
और छब्बीस जनवरी का दिन गुज़रता है

कोई सोच नहीं

ढाई अरब आखें हैं
ढाई अरब हाथ हैं
ढाई अरब पैर हैं
ये सपना देखें
मशालें थामें
और अभियान पर चल दें
सवा अरब सिर हैं
लेकिन कोई सोच नहीं

इच्छा शक्ति

उसमें
इच्छा है तो
शक्ति नहीं है
इसमें
शक्ति है तो
इच्छा नहीं है
इच्छा-शक्ति
किसी तीसरे में डालेगी प्रकृति
तब संवरेगी संस्कृति

चौदह बरस बाद

राम
चौदह बरस बाद
लौटे तो
अयोध्या वही थी उनकी
चौदह बरस बाद
मैं लौटा हूं तो
वही नहीं है मेरा गांव
यहां बहुत विकास
और कई रावण हो गये हैं

अपनी-अपनी राजनीति

राक्षस भी
रावण का पुतला
जला रहे हैं
देवगण भी
राम पर प्रश्नचिह्न
लगा रहे हैं
राजनीति है भाई
अपनी-अपनी

भारतमाता की जय

भारतमाता की जय!
भारतमाता की जय!
भारतमाता की जय!
आपने
कौन-सी जय सुनी
या की अनसुनी?
समारोह वाली?
विद्रोह वाली?
या सरहद पर खोह वाली?

अच्छे दिन आ गये

क्या चिड़ियों के, अच्छे दिन आ गये?
क्या नदियों के, अच्छे दिन आ गये?
क्या पहाड़ों के, अच्छे दिन आ गये?
क्या बांधों के, अच्छे दिन आ गये?
क्या बे-परदा धरती के, अच्छे दिन आ गये?
क्या उदास कविता के, अच्छे दिन आ गये?
यदि इनके, अच्छे दिन आ गये
तो मेरे भी, अच्छे दिन आ गये
'अच्छे दिन आ गये' पर
मुझे इतना ही कहना है

रेखा

एक रेखा
अमीरी की
खींची जा रही है
और यह निश्चित किया जा रहा है
कि कोई गरीबी रेखा के नीचे नहीं रहेगा
न कोई अमीरी रेखा के ऊपर
ताकि भारत भू पर
गांधी का रामराज स्थापित हो
मैंने देखा
नींद में सपना
तभी से है दिमाग
सरगर्म अपना

सदियां लगेंगी

झुरायी-सी शाखों पे कलियां लगेंगी
बहारों को आने में सदियां लगेंगी
नगर जब ये क्योटो बनेगा, बनेगा
हड़प्पा-सी तब तक ये गलियां लगेंगी
पहुंच भी सकेंगे वो सागर किनारे
बताओगे किस घाट नदियां लगेंगी

अब आंदोलन कौन करेगा

पट परिवर्तन कौन करेगा
अब आंदोलन कौन करेगा
राज कठिन होता जन-मन पर
बिन सिंहासन कौन करेगा
जग के हित में घर फूंक चलो
ये आवाहन कौन करेगा
गरदन और घुमा लेते हैं
शीश समरपन कौन करेगा
क्रांति विफल क्यों हो जाती है
इस पर मंथन कौन करेगा ❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा सुरभि प्रिन्टर्स, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार। छपी प्रतियाँ : 1450